THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

ॐ

श्रीजैनपुस्तकालय बनारसका

जैनतिथिदर्पण ।

वीरनिर्वाण संवत् २४३९ का ।

मूल्य)॥ आना । डाक खर्च ५ तक)॥

धर्मप्रश्नोत्तरवचनिका ।

यह ग्रंथ सकलकीर्त्ति आचार्यकृत संस्कृतमें है जिसका दूसरा नाम प्रश्नोत्तरश्रावकाचार भी है इसकी सरलवचनिका श्रीयुतपंडित लालारामजीसे कराई गई है । इसमें दशलक्षणधर्मपृच्छा, श्रावकधर्म-पृच्छा, रत्नत्रयमोक्षमार्गपृच्छा, तत्त्वपृच्छा, कर्मविपाकपृच्छा और सज्जनचित्तवल्लभपृच्छा इसप्रकार ६ अध्याय हैं जिनमें ११२१ प्रश्न और उनके सविस्तर उत्तर हैं । सर्वदर्शी सब भाइयोंके समझनेयोग्य स्वाध्याय करनेकेलिये बहुत ही उपयोगी ग्रंथ है । इसमें कागज इतना मोटा लगाया है कि वैसा कोई नहीं लगाता । अक्षर बडे और सुंदर निर्णयसागरकी टाइपमें छपा है । जिल्दसहित ३६८ पृ. न्यो २) है ।

सर्वप्रकारकी पुस्तकें मिलनेका पता--

श्रीलालजैन मैनेजर-

जैनपुस्तकालय बनारससिटी ।

Printed by Gauri Shanker Lal Manager, at the C P Press, Benares

Published by Shri Lal Jain Benares

पहिले इसे पढ़िये ।

१। हमारे यहासे-बम्बईके निर्णयसागरप्रेस, श्रीवेंकटेश्वरप्रेस, लक्ष्मीवेंकटेश्वरप्रेस, ज्ञानसागरप्रेस, हरिप्रसादभगीरथजीपुस्तकालय, तथा कलकत्तेके जीवानन्द विद्यासागर, इलाहाबादके इंडियनप्रेस, लखनऊके नवलकिशोरप्रेस और काशीकी नागरीप्रचारिणीसभा, स्याद्वादरत्नाकर कार्यालय चौखंभापुस्तकालय, लाजरसप्रेस, उपन्यासकार्यालय, उपन्यासतरंग, भार्गवपुस्तकालय आदि समस्त छापखानों और पुस्तकालयोंके छपेहुये समस्तप्रकारके हिंदी संस्कृत ग्रंथ ठीक २ भावसे मिलते हैं अर्थात् बम्बईकी पुस्तकें बम्बईके भाव कलकत्तेकी पुस्तकें कलकत्तेके भावसे मिलती हैं । जिनको जिसप्रकारकी पुस्तकें चाहिये हमारे यहांसे मंगा लिया करें ।

२। हमारे यहांसे किसीको भी कमीशन नहिं दिया जाता किंतु खासकी छपी तथा स्याद्वादरत्नाकरकार्यालयकी पुस्तकें एक प्रकारकी पांच लेने पर एक विना मूल्य भेजी जायगी ।

३। मगाई हुई पुस्तकें वापिस नहिं ली जायगी ।

४। वी पी. आठ आनेसे कमका नहिं भेजा जाता । आठ आनेसे कम लेनेवालोंको डाक खर्च सहित टिकट भेजना चाहिये ।

५। जो महाशय वी. पी. वापिस कर देंगे उनको फिर कभी वी पी नहिं भेजा जायगा हिसाब में भूल हो तो डाक खानेमें अर्जी देकर २१ दिन तक वी पी को रुकवा सकते हैं। फिर चिट्ठी देकर हमसे भूल सुधरवालें ।

६। फरमायसमेंसे जितनी पुस्तकें तैयार होंगी-बाजारमें मिलेंगी उतनी ही भेजदी जायगी। दो एक पुस्तकके लिये वी पी रोका नहिं जायगा ।

७। पत्र-नाम, ग्राम पोष्ट जिला सहित साफ हिंदीमें भेजेंगे तो उस की तामील शीघ्र ही होगी अंगरेजी उर्दू वगैरहकी चिट्ठीयोंकी तामील होनेमें प्रमाद होगा । उत्तर चाहना हो तो जवाबी कार्ड वा टिकट भेजो ।

आपका कृपाकांक्षी श्रीलालजैन,

मैनेजर-जैनपुस्तकालय पो० बनारस सिटी ।

ॐ

जैनतिथिदर्पण वीरसंवत् २४३९ । ई. १९१२–१३

कार्त्तिकशुक्ल वीरसं २४३९ ।				मार्गशीर्षकृष्ण वीर सं २४३९ ।			
ति	वार	ता.	विशेष विवरण	ति	वार	ता	विशेष विवरण
२	रवि	१०	नवेंबर । ज्ञानपुष्पदंत	१	सोम	२५	रोहिणीव्रत ।
३	सोम	११		२	मंगल	२६	
४	मंगल	१२		३	बुध	२७	
४	बुध	१३		४	गुरु	२८	
५	गुरु	१४		५	शुक्र	२९	
६	शुक्र	१५	गर्भ-नेमिनाथका	६	शनि	३०	
७	शनि	१६		७-८	रवि	१	दिसंबर १९१२ ।
८	रवि	१७	अष्टाह्निकाप्रारंभ	९	सोम	२	
९	सोम	१८		१०	मंगल	३	तप-महावीरस्वामी
१०	मंगल	१९		११	बुध	४	
११	बुध	२०		१२	गुरु	५	
१२	गुरु	२१	ज्ञान-अरनाथका	१३	शुक्र	६	
१३	शुक्र	२२	जन्मतप-पद्मप्रभका	१४	शनि	७	
१४	शनि	२३		३०	रवि	८	
१५	रवि	२४	जन्म-संभवनाथका				

दिनका चौघडिया ।

र	च	म	बु	गु	शु	श
उ	अ	रो	ला	शु	च	का
च	का	उ	अ	रो	ला	शु
ला	शु	च	का	उ	अ	रो
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
का	उ	अ	रो	ला	शु	च
शु	चं	का	उ	अ	रो	ला
रो	ला	शु	चं	का	उ	अ
उ	अ	रो	ला	शु	च	का

खग्रास
चंद्रग्रहण
फाल्गुणशुक्ल १५
शनिवारको ३॥ से
७ बजे तक

खग्रास
चंद्रग्रहण
भाद्रपदशुक्ल १५
सोमवारको ३॥ से
७ बजे तक

रात्रिका चौघडिया ।

र	चं	म	बु	गु	शु	श
शु	च	का	उ	अ	रो	ला
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
च	का	उ	अ	रो	ला	शु
रो	ला	शु	च	का	उ	अ
का	उ	अ	रो	ला	शु	च
ला	शु	च	का	उ	अ	रो
उ	अ	रो	ला	शु	चं	का
शु	चं	का	उ	अ	रो	ला

मार्गशीर्षशुक्ल वीर सं २४३९।

ति.	वार	ता.	विशेष विवरण
१	सोम	९	जन्मतप-पुष्पदंत
२	मंगल	१०	दिसवर
३	बुध	११	
४	गुरु	१२	
५	शुक्र	१३	
६	शनि	१४	
६	रवि	१५	
७	सोम	१६	
८	मंगल	१७	
९	बुध	१८	
१०	गुरु	१९	
११	शुक्र	२०	जन्मतप-मल्लिनाथ
१२	शनि	२१	[ज्ञान नामनाथ
१३	रवि	२२	
१४	सोम	२३	जन्मतप-अरनाथ
१५	मंगल	२४	तप-सभवनाथका

पौषकृष्ण वीर सं. २४३९।

ति.	वार	ता.	विशेष विवरण
१-२	बुध	२५	ज्ञान-मल्लिनाथका
३	गुरु	२६	
४	शुक्र	२७	
५	शनि	२८	
६	रवि	२९	
७	सोम	३०	
८	मंगल	३१	
९	बुध	१	जनवरी १९१३ प्रा
१०	गुरु	२	
११	शुक्र	३	जन्मतप-चन्द्रप्रभ-
१२	शनि	४	[वा पार्श्वनाथ
१३	रवि	५	रोहिणीव्रत ।
१४	सोम	६	ज्ञान-शीतलजिनका
३०	मंगल	७	

जिनशतक ।

यह ग्रंथ वि. सं. १२५ की सालमें विद्यमान आचार्यवर्य श्रीमत्समन्तभद्र स्वामीकृत चित्र काव्यका है इसमें ११६ श्लोक हैं सबके सब श्लोकोंके मुरज आदि चित्र बन जाते हैं चित्र भी अंतमें दिये गये हैं। विना टीकाके इनका अर्थ कोई लगा नहिं सकता इसकारण साथमें नरसिंहभट्टकृत संस्कृत टीका और श्रीयुत पं. लालारामजीकृत भाषाटीका भी छपाई है। ११६ श्लोकोंमें चौवीस तीर्थंकर भगवानकी स्तुति है। जिनके पदपदसे भक्ति टपकती है। पृष्ठ १२८ न्योछावर ॥।) है।

मिलनेका पता—श्रीलाल जैन

मैनेजर—जैनपुस्तकालय बनारस सिटी।

ॐ

जैनतिथिदर्पण वीरसंवत् २४३९। ई. १९१२–१३

कार्तिकशुक्ल वीरनि. २४३९।				मार्गशीर्षकृष्ण वीर सं. २४३९।			
ति.	वार	ता.	विशेष विवरण	ति.	वार	ता.	विशेष विवरण
२	रवि	१०	नवेंबर। ज्ञानपुष्पदंत	१	सोम	२५	रोहिणीव्रत।
३	सोम	११		२	मंगल	२६	
४	मंगल	१२		३	बुध	२७	
४	बुध	१३		४	गुरु	२८	
५	गुरु	१४		५	शुक्र	२९	
६	शुक्र	१५	गर्भ-नमिनाथका	६	शनि	३०	
७	शनि	१६		७-८	रवि	१	दिसंबर १९१२।
८	रवि	१७	अष्टाह्निकाप्रारंभ	९	सोम	२	
९	सोम	१८		१०	मंगल	३	तप-महावीरस्वामी
१०	मंगल	१९		११	बुध	४	
११	बुध	२०		१२	गुरु	५	
१२	गुरु	२१	ज्ञान-अरनाथका	१३	शुक्र	६	
१३	शुक्र	२२	जन्मतप-पद्मप्रभका	१४	शनि	७	
१४	शनि	२३		३०	रवि	८	
१५	रवि	२४	जन्म-संभवनाथका				

दिनका चौघड़िया।

र	चं	मं	बु	गु	शु	श
उ	अ	रो	ला	शु	चं	का
चं	का	उ	अ	रो	ला	शु
ला	शु	चं	का	उ	अ	रो
अ	रो	ला	शु	चं	का	उ
का	उ	अ	रो	ला	शु	चं
शु	चं	का	उ	अ	रो	ला
रो	ला	शु	चं	का	उ	अ
उ	अ	रो	ला	शु	चं	का

खग्रास
चंद्रग्रहण
फाल्गुणशुक्ला १५
शनिवारको ३॥ से
७ बजे तक

खग्रास
चंद्रग्रहण
भाद्रपदशुक्ला १५
सोमवारको ३॥ से
७ बजे तक

रात्रिका चौघड़िया।

र	चं	मं	बु	गु	शु	श
शु	चं	का	उ	अ	रो	ला
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
चं	का	उ	अ	रो	ला	शु
रो	ला	शु	चं	का	उ	अ
का	उ	अ	रो	ला	शु	चं
ला	शु	चं	का	उ	अ	रो
उ	अ	रो	ला	शु	चं	का
शु	चं	का	उ	अ	रो	ला

माघशुक्ल वीर सं. २४३९।				फाल्गुणकृष्ण वीर सं. २४३९।			
ति	वार	ता	विशेष विवणर	ति	वार	ता.	विशेष विवरण
१	शुक्र	७	फर्वरी २रा	१	शुक्र	२१	
२	शनि	८		२	शुक्र	२२	
३	रवि	९		३	रवि	२३	
४	सोम	१०	जन्मतप-विमलनाथ	४	सोम	२४	मोक्ष-पद्मप्रभका
५	मंगल	११		५	मंगल	२५	
६	बुध	१२	ज्ञान-विमलनाथका	६	बुध	२६	ज्ञान-सुपार्श्वनाथका
७	गुरु	१३		७	गुरु	२७	ज्ञान-चंद्रप्रभ-मोक्ष,
८	शुक्र	१४		८	शुक्र	२८	[सुपार्श्वनाथका
९	शनि	१५	रोहिणी व्रत।	९	शनि	१	मार्च गर्भ पुष्पदंत
१०	रवि	१६	जन्मतप अजितनाथ	१०	रवि	२	
११	सोम	१७		११	सोम	३	जन्मतप-ज्ञान *
१२	मंगल	१८	जन्मतप अभिनंदन	१२	मंगल	४	मोक्ष-मुनिसुव्रत
१३	बुध	१९	जन्मतप-धर्मनाथका	१३	बुध	५	
१४	गुरु	२०		१४	गुरु	६	जन्मतप-वासुपूज्य
१५				३०	शुक्र	७	

* ११ को जन्मतप-श्रेयांसनाथका और ज्ञान-आदिनाथका !

बंबईके छपे शुद्ध जैनग्रंथ।

जैनबाल बोधक प्रथम भाग	।)	शीलकथा ।/) दानकथा	।-)
दियातले अंधेरा	/)॥	दर्शनकथा=) निशिभोजनकथा	=)
समाधिमरण दो तरहका	-)	रविव्रतकथा भाऊ कविकृत	-)
अरहंतपासाकेवली	-)॥	सदाचारीबालक	-)॥
भक्तामर भाषा और मूल संस्कृत	-)	पंचमंगल रूपचंन्द्रजीकृत शुद्धपाठ	-)
दर्शनपाठ बुधजनकृत दर्शनसहित	-)	मृत्युमहोत्सव वचनिकासहित	-)॥
शिखरमाहात्म्य भाषा वचनिका	-)	निर्वाणकांड प्राकृत,भाषा महावीर	-)
सामायिक पाठ, आलोचनापाठ	-)	सामायिकपाठ भाषाटीका विधिस	-)
कल्याणमंदिर एकीभाव भाषा	)॥।	आरतीसंग्रह जिसमें ११ आरती	)॥
छहढाला दौलतरामकृत बड़े	)।॥	इष्टछत्तीसी अर्थसहित	)॥

फाल्गुणशुक्ल वीर सं. २४३२				चैत्रकृष्ण वीर सं. २४३१।			
ति	वार	ता	विशेष विवरण	ति	वार	ता	विशेष विवरण
१	शनि	८	मार्च ३रा	१	रवि	२३	
१	रवि	९		२	सोम	२४	
२	सोम	१०		३	मंगल	२५	[तनाथ
३	मंगल	११	गर्भ-अरनाथका	४	बुध	२६	ज्ञान पार्श्वनाथ मोक्ष, अन
४	बुध	१२		५	गुरु	२७	गर्भ-चंद्रप्रभका
५	गुरु	१३	मोक्ष-मल्लिनाथका	६	शुक्र	२८	
६	शुक्र	१४	रोहिणी व्रत।	७	शनि	२९	
७-८	शनि	१५	मोक्ष चंद्रप्रभ और	८	रवि	३०	गर्भ-शीतलनाथका
९	रवि	१६	गर्भ संभवनाथ	९	सोम	३१	जन्मतप-आदिनाथ
१०	सोम	१७	का अष्टान्हिका	१०	मंगल	१	अप्रल ४ था।
११	मंगल	१८	प्रारंभ	११	बुध	२	
१२	बुध	१९		१२	गुरु	३	
१३	गुरु	२०		१३	शुक्र	४	
१४	शुक्र	२१	होलिका।	१४	शनि	५	
१५	शनि	२२	चंद्रग्रहण।	१५	रवि	६	ज्ञान-अनंतनाथका

छहढाला पान्नअक्षरी द्यानतकृत ~)
छहढाला बुधजनकृत बड़ अक्षर ~)
छहढाला अमर पुराने कवि१ ·जकृ ~)
रत्नकरण्डश्रावकाचार सान्वयार्थ ।)
रत्नकरण्डश्रावकाचार वचनिका बड़ा ।)
मोक्षमार्गप्रकाश भाषावचनिका १॥।)
प्रद्युम्नचरित्र वचनिका २॥।)
बनारसीविलास कवित्तबद्ध १॥)
वृंदावनविलास " ॥।)
भाषापूजासंग्रह ॥)
मोक्षशास्त्र तत्वार्थसूत्र मूलशुद्ध ~)॥
मुनिवंशदीपिका नयनसुखजाकृत)॥
सामाजिकचित्र १ शठकी कहानी ~)
विनतीसंग्रह (२४ विनतियां) ≡)
शाकटायनप्रक्रियासंग्रह व्याकरण ३।)
पार्श्वपुराण चोपईबंध १।)
प्रवचनसार कवित्तबद्ध १।)
धूर्त्ताख्यान पुराणोंकी हँसी ≡)
नित्यनियमपूजा संस्कृतभाषा ।)
मनोरमा ॥) ज्ञानसूर्योदयनाटक ॥)

चैत्रशुक्ल वीर सं २४३९।				वैशाखकृष्ण वीर सं २४३९।			
ति	वार	ता	विशेष विवरण	ति.	वार	ता.	विशेष विवरण
१	सोम	७	गर्भ-मल्लिनाथ	१	सोम	२१	
२	मगल	८		२	मगल	२२	गर्भ-पार्श्वनाथका
३	बुध	९	ज्ञान-कुंथुनाथ	३	बुध	२३	
४	गुरु	१०		४	गुरु	२४	
५	शुक्र	११	रोहिणी । मोक्ष	५	शुक्र	२५	
६	शनि	१२	मोक्ष समवनाथ	६	शनि	२६	
७	रवि	१३		७	रवि	२७	
८	सोम	१४		८	सोम	२८	
९	मंगल	१५		९	मलग	२९	ज्ञान-मुनिसुव्रत
१०	बुध	१६	(अरनाथ मोक्ष	१०	बुध	३०	जन्मतप "
११	गुरु	१७	ज०त०ज्ञा०मो०	१०	गुरु	१	मई ५ वा
१२-१३	शुक्र	१८	ज.महावीरस्वा	११	शुक्र	२	
१४	शनि	१९		१२	शनि	३	
१५	रवि	२०	ज्ञान-पद्मप्रभ	१३	रवि	४	
मोक्ष-५ को आजितनाथका ११ को				१४	सोम	५	मोक्ष-नमिनाथका
सुमतिनाथका -जन्म तप ज्ञान मोक्ष				३०	मगल	६	

तत्वार्थसूत्र बालबोधनी भा टी ।॥)
भक्तामरस्तोत्र सान्वयार्थ ।)
द्रव्यसग्रह सान्वयार्थ कवित्त ।)
सूक्तमुक्तावली सान्वयार्थ " ।≈)
व्रतोद्यतारकथा श्रुतपचमीपूजन≡)
क्षत्रचूडामणि भाषाटीका सहित।॥)
जैनविवाहपद्धति विधिसहित ≡)
दि जैनग्रंथकर्ता व उनके ग्रथ≡)
भाषानित्यपाठसग्रह रेशमी गु ॥)
सज्जनचित्तवल्लभ भा कवितास≈)
जैनसिद्धातप्रवेशिका ≡)
जैनपदसग्रह पहि ।≈) दू ।) ती ।-)
जैनपदसग्रह चौ. ॥≈) पा ।≈)
ज्ञानदर्पण आध्यात्मिक कवित्त ।)
अकलकदेवचरित्र स्तोत्र भाषाछद≡)
भूधरजैनशतक≈)॥ पचेंद्रियसवाद-)
उपमितिभवप्रपचाकथा प्र. खं ॥)
बारसअणुवेक्खा कुदकुंदकृत भा. ।)
बुधजनशतसई ७०० दोहे ≡)
क्रियामजरी विधिसहित ≈)
सप्तव्यसनचरित्र वचनिका ≡)
पुरुषार्थसिद्धयुपायसार्थ ।)

पता-श्रीलालजैन मैनेजर-जैनपुस्तकालय बनारस सिटी ।

वैशाखशुक्ल वीर सं २४३९ ।				ज्येष्टकृष्ण वीर सं २४३९ ।			
ति.	वार	ता	विशेष विवरण	ति	वार	ता	विशेष विवरण
१	बुध	७	जन्मतपमोक्ष	१	बुध	२१	
२	गुरु	८	रोहिणी व्रत	२	गुरु	२२	
३	शुक्र	९	अक्षयतृतीया	३	शुक्र	२३	
४	शनि	१०		४	शनि	२४	
५-६	रवि	११	ग० मो० अभिनंदन	५	रवि	२५	
७	सोम	१२		६	सोम	२६	
८	मंगल	१३	गर्भ-धर्मनाथका	७	मंगल	२७	
९	बुध	१४		८	बुध	२८	गर्भ-श्रेयांसनाथका
१०	गुरु	१५	ज्ञान-महावीर स्वा	९	गुरु	२९	
११	शुक्र	१६		१०	शुक्र	३०	गर्भ-विमलनाथ
१२	शनि	१७		११	शनि	३१	
१३	रवि	१८		१२	रवि	१	जून । जन्म अनंतनाथ
१४	सोम	१९		१३	सोम	२	
१५	मंगल	२०		१४	मंगल	३	जन्मतपमोक्ष
				३०	बुध	४	रोहिणी गर्भ अजित

जन्मतप-मोक्ष १ को कुंथुनाथका | जन्मतप मोक्ष १४ को शान्तिनाथका ।

जैनतत्त्वप्रकाशिनीसभा इटावाकी ट्रैक्ट ।

आर्यमतलीला ।=) सैकड़ा २४) आर्योंका तत्त्वज्ञान)॥ सै २) ईश्वरका कर्तृत्व)। सै. ।≡) दुरांतिनिवारण)। सै. १) भजनमंडली प्र भाग)॥ द्वि. भाग)॥ सै २) जैनियोंके नास्तिकत्वपर विचार)। सै १) धर्मामृत रसायन -) सै ५) सृष्टिकर्तृत्वमीमांसा -) सै ५) भूगोलमीमांसा)॥ आर्योंकी प्रश्न -) सै ५) शास्त्रार्थअजमेरका पूर्वरंग =)॥ सै. १४)

जैनधर्मप्रचारिणीसभाकाशीकी ट्रैक्ट ।

सनातनजैनधर्म)॥ सै २) श्रीमहावीरस्वामी)॥ सै. २) इत्यादि ।

मिलनेका पता-श्रीलाल जैन

मैनेजर-जैनपुस्तकालय बनारस सिटी ।

ज्येष्ठ शुक्ल वीर सं २४३९।				आषाढ कृष्ण वीर सं. २४३९।			
ति.	वार.	ता	विशेष विवरण	ति.	वार.	ता	विशेष विवरण
१	गुरु	५		१	गुरु	१९	
२	शुक्र	६		२	शुक्र	२०	गर्भ-आदिनाथका
३	शनि	७		३	शनि	२१	
४	रवि	८	मोक्ष-धर्मनाथका	४	रवि	२२	
५	सोम	९	श्रुतपचमी *	५	सोम	२३	
६	मगल	१०		६	मगल	२४	गर्भ वासुपूज्य और
७	बुध	११		७	बुध	२५	मोक्ष विमलनाथ
८-९	गुरु	१२		७	गुरु	२६	
१०	शुक्र	१३		८	शुक्र	२७	
११	शनि	१४		९	शनि	२८	
१२	रवि	१५	जन्मतपसुपार्श्वनाथका	१०	रवि	२९	जन्मतप नमिनाथ
१३	सोम	१६		११	सोम	३०	
१४	मगल	१७		१२	मंगल	१	जुलाई ७ वा
१५	बुध	१८		१३	बुध	२	रोहिणिव्रत
				१४	गुरु	३	
				३०	शुक्र	४	

* इसदिन शास्त्रपूजा, शास्त्रदान शास्त्रोंकी संभाल करनाचाहिये।

चरित्रगठन।

कैसा ही कोई बुरे आचरणोंवाला क्यों न हो जो इसे एकबार पढेगा उसी घडीसे अपने आचरण सुधारनेकेलिये तैयार हो जायगा। इतना ही नहीं, उसे अपने बुरे आचरणोंपर घृणा हो जायगी और फिर वह कभी उन का नाम भी न लेगा। लोग अपनी सतानको शिक्षित और सच्चरित्र बनाने केलिये हजारों रुपया खर्च कर डालते हैं तो भी सफल मनोरथ नहीं होते हैं ऐसे लोगोंको अपनी सतानको यह पुस्तक देकर परीक्षा करना चाहिये। जो नवयुवक विद्यार्थी अपना चरित्र उत्तम बनाना चाहते हैं उन्हें यह पुस्तक अवश्य पढना चाहिये। इससे मनुष्य अपने समाजमें आदर्श बन सकता है. हिंदीमें यह पुस्तक एक रत्न है। पृष्ठ २३२ मूल्य बारह आना।

आषाढ शुक्ल वीर सं. २४३९ ।				श्रावण कृष्ण वीर सं. २४३९ ।			
ति.	वार.	•	विशेष विवरण	ति.	वार.	ता	विशेष विवरण
१–२	शनि	५		१	शनि	१९	
३	रवि	६		२	रवि	२०	गर्भ-मुनिसुव्रतका
४	सोम	७		३	सोम	२१	
५	मंगल	८		४	मंगल	२२	
६	बुध	९	गर्भ-महावीरस्वामी	५	बुध	२३	
७	गुरु	१०		६	गुरु	२४	
८	शुक्र	११	मो. नेमिनाथ अष्टा-	७	शुक्र	२५	
९	शनि	१२	[न्हिका प्रारंभ	८	शनि	२६	
१०	रवि	१३		९	रवि	२७	
११	सोम	१४		१०	सोम	२८	गर्भ-कुंथुनाथका
१२	मंगल	१५		११	मंगल	२९	रोहिणी व्रत ।
१३	बुध	१६		१२	बुध	३०	
१४	गुरु	१७		१३	गुरु	३१	
१५	शुक्र	१८		१४	शुक्र	१	अगष्ट ८ वां
				१५	शनि	२	

दिलचस्प ऐयारीके उपन्यास ।

चंद्रकांता चारों भाग बडे अक्षर २) चंद्रकांता चारों भाग गुटका छोटे अक्षर १) चंद्रकांतासंतति बडे साइजमें २४ भाग १२) चंद्रकांता संतति २४ भाग गुटका ६) भूतनाथकी जीवनी चंद्रकांतामें जिस भूतनाथका नाम आया है उसका अद्भुतचरित्र पांच भागोंमें ३॥) मोती महल १) कुसुमलता ऐयारी और तिलस्म २।) दो नकावपास २।=) नरेंद्रमोहिनी उपन्यास १) कुसुमकुमारी १) पिशाचपुरी ॥=) चंद्रमुखी ॥) सूर्यकांता ॥)

ये सब ऐयारीके उपन्यास एस दिलचस्प हैं कि एक बार हाथमें लिये बाद पूरा किये बिना पुस्तक हाथमेंसे नहिं छुटती । खाना पीना वा जरूरी काम भी उसको बांचकर ही करने पड़ते हैं । झूठ समझते हैं तो १) का चंद्रकांता उपन्यास ४ भागका गुटका मंगा देखिये । फिर क्या मजाल है जो २४ भाग संतति और ५ भाग भूतनाथकी जीवनी न देखें ।

श्रावण शुक्ल वीर सं २४३९ ।				भाद्रपद कृष्ण वीर.सं. २४३९ ।			
ति.	वार.	ता	विशेष विवरण	ति	वार	ता	विशेष विवरण
१	रवि	३		१	रवि	१७	सोलहकारण प्रा
२	सोम	४	गर्भ-सुमतिनाथका	२	सोम	१८	ज्ञान-वासुपूज्य
३	मगल	५	छोटी तीज	३	मगल	१९	
४-५	बुध	६		३	बुध	२०	
६	गुरु	७	जन्मतप नेमिनाथ	४	गुरु	२१	चौबीसीव्रतप्रा.
७	शुक्र	८	मोक्ष-पार्श्वनाथका	५	शुक्र	२२	
८	शनि	९		६	शनि	२३	
९	रवि	१०		७	रवि	२४	गर्भशांतिनाथ
१०	सोम	११		८	सोम	२५	रोहिणी व्रत ।
११	मगल	१२		९	मगल	२६	
१२	बुध	१३		१०	बुध	२७	
१३	गुरु	१४		११	गुरु	२८	
१४	शुक्र	१५		१२-१३	शुक्र	२९	
१५	शनि	१६	राखी पू. मोक्ष-श्रेयासनाथका ।	१४	शनि	३०	
				३०	रवि	३१	

जासूसी (गुप्तपुलिसके) उपन्यास ।

कटोराभर खून ॥=) गुप्तरहस्य ॥=) खूनमिश्रित चोरी ।॥) कटाशिर ।॥) विकट बदलौवल सचित्र १) सच्चा बहादुर ४) मायावी १॥) जुमेलिया ।) दो बहिन ।॥) खून २) लाइनपर लास १) विलायती जासूस १) अद्भुत खून २) अद्भुत जासूस २) हत्यारहस्य १।) गोविंदराम ।॥) जासूस चक्कर में ।॥) दारागाका खून ॥) लाखरुपया ॥=) खूनीका भेद ॥) प्रतिज्ञापालन १।) मनोरमा जादूगरनीकी जासूसी ॥=) परिमल ।॥) अजीबलाश ।) पद्मावती ॥। हसीना ॥) हम्मामका मुरदा ।=) देवीसिंह विकट जासूस २।=) चद्र-माला १।) नकलीरानी ।) विचित्रखून ।/) नौलखाहार =) लगड़ाखूनी=) तांतियां भील =) हत्यारहस्य =) चोरसे बढकर चोर =) जिंदेकी लास =) दोखून =) अबदुलाका खून =)

पता श्रीलालजैन मैनेजर-जैनपुस्तकालय बनारस सिटी।

भाद्रपदशुक्ल वीर सं २४३९ ।				आश्विनकृष्ण वीर स. २४३९ ।			
ति	वार	ता	विशेष विवरण	ति.	वार	ता	विशेष विवरण
१	सोम	१	सितवर, लब्धवि.प्रा.	१	मग	१६	पो का फलसा
२	मगल	२		२	बुध	१७	गभ नेमिनाथ
३	बुध	३	राटतीजव्रत	३	गुरु	१८	
४	गुरु	४		४	शुक्र	१९	
५	शुक्र	५	पु० द० व्रत प्रारभ	५	शनि	२०	
६	शनि	६	गर्भ सुपार्श्वनाथ	६	रवि	२१	
७	रवि	७	निर्दोष मुक्तावाली	७	सोम	२२	रोहिणीव्रत ।
८	मगल	८		८	मगल	२३	
९	मगल	९		९	बुध	२४	
१०	बुध	१०	सुगध दशमी	१०	गुरु	२५	
११	गुरु	११	अनतव्रत प्रारभ	११	शुक्र	२६	
१२	शुक्र	१२	रत्नत्रयकाजीव्रत	१२	शनि	२७	
१३	शनि	१३		१३	रवि	२८	
१४	रवि	१४	अ०च०मो वासुपूज्य	१४	सोम	२९	
१५	सोम	१५	चद्रग्रहण ।	३०-१	मगल	३०	ज्ञान-नेमिनाथका

अच्छे २ दिलचस्प उपन्यासोंके नाम ।

किलेकी रानी ।।।) कालीनागिन समाजका अनूठा चित्र १) जीवनप्रभात १) जीवनसध्या ।।।) देवी-बाबू बकिमचद्रकी देवीचौधरानी १) नरपिशाच (रेनलडका उपन्यास) ३) माधवी माधव २ अथमें अनर्थ १) विषवृक्ष १) रमा और माधव ।।) लखनऊकी कब्र २) ससार चक्र १) ससारदर्पण २) सूर्यकान्ता उपन्यास ।।) चद्रलोककी यात्रा १) नूतनचरित्र १ डबलबीवी ।।) बड़ा भाई ।।।) तीन पतोहू १) भोजपुरका ठगा (तमलवा तोरकी मोर) ।।) दुर्गेशनदिनी ।।।) नवाबनदिनी दुर्गेशनदनीका परिशिष्ट १।) कथा सरित्सागर १६ भाग ८) उपन्यास भडार २१ छोट २ उपन्यास ।।।) किसानकी बेटी १)

श्रीलालजैन मैनेजर जैनपुस्तकालय,

बनारस सिटी ।

आश्विनशुक्ल वीर सं. २४३९।				कार्त्तिककृष्ण वीर सं. २४३९।			
ति.	वार	ता	विशेष विवरण	ति.	वार	ता.	विशेष विवरण
२	बुध	१	अक्टूबर १० वां	१	गुरु	१६	गर्भ-अनंतनाथका
३	गुरु	२		२	शुक्र	१७	
४	शुक्र	३		३	शनि	१८	
५	शनि	४		४	रवि	१९	रोहिणी । ज्ञान-
६	रवि	५		५	सोम	२०	(संभवनाथका
७	सोम	६		६	मंगल	२१	
८	मंगल	७	मोक्ष-पुष्पदंत और	७	बुध	२२	
९	बुध	८	।शीतलनाथ	८	गुरु	२३	
१०	गुरु	९	विजय दशमी ।	९-१०	शुक्र	२४	
११	शुक्र	१०		११	शनि	२५	
१२	शनि	११		१२	रवि	२६	
१३	रवि	१२		१३	सोम	२७	
१३	सोम	१३		१४	मंगल	२८	
१४	मंगल	१४		३०	बुध	२९	वीरनिर्वाण दीपोत्सव ।
१५	बुध	१५					

बालकोपयोगी पुस्तकें ।

हितोपदेशभाषा टीका सहित १) बालविनोद पांचों भाग (तस्वीरें उपदेश) १⁀)॥ लड़कोंका खेल ८४ चित्र हैं ≈)॥ खेलतमासा चित्र मयकविता के ≈) सचित्र अक्षरलिपी ≈) जैनबालबोधक प्रथम भाग ।) बालबोध जैनधर्म १-२-३ भाग ≡)॥ चौथाभाग ।≈) हिंदीकी पहिली ≈)॥ दूसरी ।) तीसरी ।≈) विश्वलोचनकोश (जैनकोश) भा टी स. १।≡) अमरकोपभाषा टीका सहित १॥) ऋद्धि धनकमानेकेलिये कल्पवृक्ष १) सम्पत्तिशास्त्र धनकमानेके उपाय २॥) स्वामी और स्त्री ।॥) शिक्षा २॥) बच्चोंकाखिलौना ।–) बालस्वास्थ्यरक्षा ॥) बालोपदेश ।) बालहितोपदेश ॥) बालपंचतंत्र ॥) बालहिंदीव्याकरण १३६ पृष्ठ ।

पता–श्रीलालजैन मैनेजर जैनपुस्तकालय बनारस सिटी ।

स्याद्वादग्रंथमाला ।

स्याद्वादग्रंथमालामें सब ग्रंथ भाषा, वा भाषाटीका सहित छपते हैं। वार्षिक न्योछावर ५) रु० है डाकखर्च जुदा है सो प्रत्येक अंक डाकखर्च मात्रके वी. पी से भेजा जाता है। पाच रुपयोंमें ६० फारमतकके ग्रंथ भेजे जाते हैं। एक फारममें बड़े बड़े ८ छोटे छोटे १६ पृष्ठ होते हैं। हालमें तीन ग्रंथ छप गये। जिनशतक संस्कृत तथा भाषाटीकासहितफारम ८ पृष्ठ १२८ न्यो० ॥|) का। धर्मरत्नोद्योत चौपईबंध फारम १२ पृष्ठ १८२। न्यो० १|) धर्मप्रश्नोत्तरवचनिका फारम ३४ पृष्ठ २६८। चौथा ग्रंथ सान्वयार्थ व भावार्थसहित तत्त्वार्थसार छपेगा। हालमें श्रीआदिपुराणजी संस्कृत और वचनिकाबहुत ही सुंदर छपरहे हैं। जिसके अनुमान २५० फारम वा २०००पृष्ठ होंगे यह ग्रंथ भी हरमहीने जितना छपता है सबको भेजा जाता है। ६० फारम पूरेहुये बाद फिर सबके ५) रु भेजने होंगे। जिनको नये २ ग्रंथोंकी स्वाध्याय करना हो ५) रु भेजकर वा वीपीसें ऊपरलिखे ग्रंथ मंगाकर ग्राहक बन जावें।

सनातनजैनग्रंथमाला ।

इस ग्रंथमालामें सब ग्रंथ संस्कृत प्राकृत व संस्कृतटीकासहित छपते हैं। यह ग्रंथमाला प्राचीनग्रंथोंका जीर्णोद्धारकरके सर्वसाधारणमें जैनधर्मका प्रभाव प्रगटकरनेकी इच्छासे प्रगट की जाती है। इसमें सब विषयोंके ग्रंथ छपेंगे। हालमें आप्तपरीक्षासटीक, समयसारनाटक दो संस्कृतटीकासहित, छप रहे हैं। इनके पश्चात् रविषेणाचार्यकृत पद्मपुराणजी वा राजवार्त्तिकजी छपेंगे। इसकी वार्षिक न्योछावर ८)रु० है। प्रत्येक अंक १० फारमका होगा। जिसमें दो से अधिक ग्रंथ नहिं होंगे। डाँक खर्च जुदा है सो प्रत्येक अंक डाक खर्च के वी पी से भेजा जायगा। यह ग्रंथमाला जिनधर्मका जीर्णोद्धार करने वाला है-इसका ग्राहक प्रत्येक जैनी भाई व मंदिरजीके सरस्वतीभंडारको बनकर सब ग्रंथ संग्रह करके संरक्षण करना चाहिये और धर्मात्मा दानवीरोंको इसके ग्रंथ मंगाकर अन्यमती विद्वानोंको पुस्तकालयोंको वितरण करना चाहिये।

पता—पन्नालाल बाकलीवाल

मालिक-स्याद्वादरत्नाकरकार्यालय, पोस्ट-बनारस सिटी।

संस्कृत और नवीन हिंदी अनुवाद सहित

श्रीआदिपुराणजी छप रहे हैं।

न्योछावर १४) रु. डाक खर्च जुदा।

इस ग्रंथके मूल श्लोक अनुमान १२००० के हैं और इसकी वचनिका जयपुरवाले पंडित दौलतरामजी कृत २५००० श्लोकों में बनी हुई है। पहिले इसी वचनिकाके छपानेका विचार किया था परंतु मूल ग्रंथसे मिलाने पर मालूम हुवा कि पं. दौलतरामजी से पूरा अनुवाद नहिं किया। भाषा भी ढूंढाडी है सब देशके भाई नहीं समझते इसकारण अतिशय सरल सुंदर अतिउपयोगी नवीन वचनिका बनवाकर छपाना प्रारंभ किया है। वचनिकाके ऊपर संस्कृत श्लोक छपनेसे सोनेमें सुगंध हो गई है। आप देखेंगे तो खुश हो जांयगे। इसके मूल सहित अनुमान५२०००श्लोक और२०००पृष्ट होंगे

इतने बडे ग्रंथका छपाना सहज नहीं है हर दूसरे महीने ८०-१०० या १२५ पृष्ठ छपते हैं सो हम आजतक छपेहुये कुल पत्रे भेजकर ५) रुपये मंगा लेंगे, उसके बाद हर दूसरे महीने जितने पत्र छपैंगे भेजते जायगे ७२० पृष्ट पहुचनेपर फिर ५)रु. पेशगी मंगा लेंगे। इसीतरह ग्रंथ पूराकर दिया जायगा।

यह ग्रंथ ऐसा उपयोगी है कि यह सबके घरमें स्वाध्यायार्थ विराजमान रहै। यदि ऐसा नहीं हो सकै तो प्रत्येक मंदिरजी व चैत्यालयमें तो अवश्य ही एक २ प्रति मंगाकर रखना चाहिये।

पत्र भेजनेका पता—पन्नालाल बाकलीवाल,

मालिक-स्याद्वादरत्नाकरकार्यालय बनारस सिटी।

ॐ

सत्यवादी ।

सत्य एक अपूर्व रत्नाकर है, जो इसमें अवगाहन करते है, उन्हें अलभ्य रत्न प्राप्त हेते है ।

प्रथम भाग } अगहन, पौष श्रीवीर नि. २४३९ } अंक ४-५

श्रीसीमन्धरस्वामीके नाम

खुली चिठ्ठी ।

(लेखक, श्रीयुत् वाडीलाल मोतीलाल शाह)

प्रेमके समुद्र हे प्रभो ! मैं आज्ञानी हूं, चारों ओरसे मोहपाशमें फँसा हुआ हूं, अशरण हूं और अनेक प्रकारकी आधि व्याधिसे ग्रसित हूं । ऐसी भयंकर स्थितिमें किसके पास जाकर मै भीख मागूं? किससे ज्ञानका मार्ग समझूं? किसके पास जाकर हृदयकी उत्कण्ठा मिटाऊं और किसके द्वारा ज्ञानांजन अंजवाकर अज्ञानान्ध दूर करूं? मुझे ऐसा परम पुरुष अभीतक कोई प्राप्त नहीं हुआ । इसीसे भूलकर यहां वहां भटकता फिरता हूं-इधर उधर टकराता फिरता हूं । कहीं भी सच्चेमार्गके न मिलनेसे मेरी यह हाल्त होगई है । पर हे विभो! आप तो दयालु हो, भक्त वत्सल हो, अन्धेके

लिए आंख हो, अज्ञानी पुरुषोंके हृदयमें ज्ञानका प्रकाश करनेवाले हो, संसारका उद्धार करनेवाले हो और कलियुगमें भी सत्य-युगके प्रवर्तक हो। इस प्रकार आपकी गुणमाला सुनकर ही मै आपकी शरण आया हूं।

हे दयाके समुद्र! आपके अपार करुणासमुद्रमेंसे एक करुणाकी बूंद इस तृषित पथिकके लिए भी दान करो। मुझे पूर्ण भरोसा है कि मेरी यह आशा व्यर्थ न जायगी। जबतक आपमें दया है—जब-तक यथार्थमें आप करुणासागर कहे जाते हो—तबतक ऐसी आशाके रखनेका मुझे पूर्ण अधिकार है।

आप दूर हो, इसकी मुझे कुछ चिन्ता नहीं। जो लोग स्थूल दृष्टिसे देखते है उनके लिए तो आप सचमुच ही बहुत दूर हो। परन्तु इससे मुझे क्यों चिन्ता हो? प्रेममें—उन्नत प्रेममें—अवर्णनीय बल है। उसमें संकीर्णताको जगह नहीं। करोडों कोशकी दूरीपर रहते हुए भी हृदय दूसरी ओर आकर्षित हो जाता है, यह सच्चे प्रेममें शक्ति है। जब मुझमें आपकी भक्ति है—मेरा आपपर सच्चा प्रेम है—तब मुझे आपके दूर रहनेका कोई दुःख नहीं।

कमल करोडों कोशकी दूरीपर रहता है, परन्तु सूर्यको देखते ही वह विकसित हो उठता है। चन्द्रकान्तमणि चन्द्रमासे बहुत दूर होनेपर भी उसके उदयके साथ ही द्रवित होने लगती है। तब हे करुणानिधान! आपके दूर रहते हुए भी यदि आपके प्रति मेरा पूज्य-भाव है—भक्तिकी सरलता है—तो इसमें सन्देह नहीं कि वह पूज्य-भाव—वह भक्ति—आपको मेरी ओर खींच सके। कदाचित् आप यह समझो कि मुझमें वैसा बल, वैसी भक्ति, वैसा पूज्यभाव

और आपके देखनेकी वैसी शक्ति नहीं है तो उसे आप ही पूर्ण करना। जिसकी कमी हो उसका पूर्ण करना आपके हाथमें है। पर हे नाथ! अब आपका इधर आये बिना छुटकारा नहीं हो सकता। आइये! अधमोद्धारक! आइये!! इस हृदय मन्दिरमें पधारिये। पर हे नाथ! मुझे इस बातका बड़ा दुःख है कि आपकी सेवा करनेके लिए मेरेपास कुछ नहीं है। मैं किससे आपकी सेवा करूं? इसकी मुझे कुछ सूझ नहीं पड़ती। मैं तो केवल यही वारवार प्रार्थना करता हूं कि हे करुणासागर! आप आइये और भक्त जनोंकी अभिलाषा पूरी कीजिए।

हे गुरुदेव! मैं आपके पाससे धन, दौलत, आदि कुछ भी नहीं मागता। पर हां एक चीजकी मुझे अवश्य जरूरत है। उसके लिए मैं आपसे भीख मागूंगा। मुझे विश्वास है कि आपसे चिन्तामणिके पास मेरी याचना—भीख—व्यर्थ न जायगी—मुझे निराश न होना पड़ेगा। आप मुझे मेरी मांगी हुई भिक्षा प्रदान करेंगे। मैं आपकी सेवा करना मागता हूं—आपके चरणकमलकी सेवाका व्रत चाहता हूं। यद्यपि मैं यह अच्छी तरह समझता हूं कि तलवारकी धार पर चलनेसे भी कहीं अधिक भयंकर यह व्रत है पर फिर भी इसीकी याचना करता हूं।

हे विभो! आपको वहां अकेला रहना कैसे अच्छा लगता है? हम लोगोंको अज्ञानान्धकारमें छोड़कर आपका वहां रहना क्योंकर उचित हो सकता है? आज आपके पवित्रधर्मकी स्थिति कैसी होगई है? आप इससे अनभिज्ञ नहीं हैं। नहीं जान पड़ता फिर आप इस ओरसे क्यों निरुद्यमी हैं? अब अवधि आगई है।

यदि अब भी आप इसे इसी स्थितिमें बहुत दिनोंतक रक्खेंगे तो इसका क्या परिणाम होगा यह कहना जरा कठिन है।

आप सब जानते हो। आपकी यह गहरी चुपकी—यह बहुत दिनोंकी मौन अवश्य किसी प्रयोजनको लिए हुए है। पर अब यह छोडनी पडेगी। हे प्रभो! हे अनाथरक्षक! अब इस मौनका त्याग करके इधर आइये! अवश्य आइये!! और फिरसे ज्ञानदीपकका प्रकाश कीजिए। फिरसे संसारकी सत्य और पवित्र मार्गपर श्रद्धा कराइये। आपके द्वारा प्रकाशित ज्ञानरूपी सूर्यको अज्ञान रूपी बादलोंने बहुत दिनोंसे आच्छादित कर रक्खा है। अभीतक तो उस प्रकाशकी ज्योती कुछ कुछ टिमटिमा रही थी पर अब वह भी बिलकुल बुझना चाहती है। हे नाथ! जिनको आपने मालिककी भाति हमारी रक्षाके लिए भेजे थे—जिनको आपने अपने प्रतिनिधिकी जगह स्थापित किए थे—वे अब केवल अपनी सत्ता—अधिकारके—लोभी हुए दीख पडते है। मान उन्हें बहुत सुहाता है। स्वार्थने उन्हें अन्धे बना दिये है। अब हमारी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है। इसलिए हे प्रभो! आपके यहां आये बिना कोई मार्ग हमारे सुधारका दिखाई नहीं पडता। अब वह समय नहीं रहा जो आप अपने शिष्योंको भेजकर फिरसे धर्मका मार्ग चलावें—उसका उद्धार करें। अब तो आपहीको आना पडेगा। क्योंकि वस्तुकी परिस्थिति ही ऐसी होगई है जो आपके आये बिना उसका सुधार होना कठिन है। इस भयानक समयमें सामान्य शिष्योंके द्वारा यह गाढ़े अन्धकारका—पोपलीलाका—अभेद्य आवरण नहीं भेदा जा सकेगा—नहीं हटाया जा सकेगा। हे प्रभो! इतना दुराग्रह बढ़ गया है,

इतनी संकीर्ण दृष्टि होगई है और अभिमानका साम्राज्य इतना बढ़-गया है कि उसके तोड़नेके लिए सामान्य हाथीकी नहीं किन्तु गन्ध-गजकी जरूरत है। छोटे छोटे तारे इस गाढ़ अन्धकारको कभी नहीं भेद सकेंगे। अब तो हमें आपकी—ज्ञानसूर्यकी—ही आवश्यकता है। आप सदा विद्यमान रहते हो, धर्मकी रक्षा करते हो, उसके हितके लिए प्रयत्न करते हो, उसे नष्ट होनेसे बचाते हो और उसके चारों ओर अपने धर्मरक्षक हाथोंको हर समय रक्खा करते हो। पर यह हाल बहुत थोड़े जानते हैं। जब यह ज्ञान ही थोड़ेसे लोगोंको ज्ञात है तब उसपर श्रद्धा—भक्ति—रखनेवाले यदि कोई विरले हों तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर ऐसे विरले दो, चार, पांच, दश इस समयमें भी हों तो वे बहुत अच्छे हैं। यह मैं आपको शुद्ध अन्तःकरणसे विश्वास दिलाता हूं। हे पाठक ! आपको मानकी अथवा पूजनकी कुछ दरकार नहीं है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं। लोग आपके परोपकारकी खूबी समझें या न समझें इसकी आपको परवा नहीं, पर इस अश्रद्धासे उन विचारोंका बहुत अहित होता है। वे किसी काममें जरासे विघ्नके आजानेपर भाग जाते हैं—हिम्मत हार जाते हैं। जो उन्हें खबर हो, श्रद्धा हो—अविचल श्रद्धा हो—कि आप शासनके नायक, देवाधिदेव, प्रकाशित सूर्य बैठे हुए हैं तो फिर हम आपके पुत्र शुभकामनाओंको किस लिए पीछी रहने दें ? किस लिए पूर्ण मन और पूर्ण बलसे आगे नहीं बढ़ते ? पड़ूंगा लड़-खड़ाऊंगा तो हाथके पकड़नेवाले—सहारा देनेवाले—पिताजी पास ही खड़े हैं ऐसी श्रद्धा हो तो बालक कैसे चलना न सीखे ? पर क्या किया जाय ? आपके स्थापित किए हुए नेताओंमें ही आपके अस्तित्व-

की श्रद्धा नष्ट हुई दिखाई पडती है । वे ही राजाका अनादर करके राजगद्दीको पचा गये है तो फिर उनपर विश्वास रखने वालोंमें वैसी श्रद्धा कैसे संभव हो सकती है ?

हे नाथ! यह मेरी प्रार्थना मेरे लिए नहीं । आपकी सेवारूपी अमृतफलके सिवा मुझे किसी वस्तुकी परवा नहीं । पर चारों ओर जब दृष्टि दौडाता हूं तब मुझे सचमुच बड़ा भारी खेद होता है—मेरा हृदय द्रवित हो उठता है और इस समय क्या करना चाहिए इसकी सूझ न पडनेसे सब हिम्मत हार जाता हूं—अधीर हो उठता हूं।

हे रक्षक! आप यह अच्छी तरह जानते हो कि इस धर्मके तीन प्रधान भाग होगये है। परन्तु जब उनके भी अन्तर विभागोंपर विचार किया जाता है तब आखोंमें आसूं आये विना नहीं रहते । इन अन्तर विभागोंने तो इस धर्मके सत्यरूपी शरीरका चूर चूर कर डाला है।

अब ऐसा अमृतफल अथवा संजीवन औषधि कहांसे लाई जाय कि जिससे फिर भी यह शरीर अपनी असली दशा प्राप्त कर सके ? क्रियाओंमेंसे चैतन्य चल बसा है। अब वे खाली खोखलासी हो गई है। सूत्र केवल तोतेकी भांति मुखसे उच्चारण किया जाता है। उसके अर्थ करनेवाले भी उसका ठीक ठीक अर्थ समझते होंगे यह नहीं जान पडता । अब तो टीका करनेवाले, शब्दको तोड मरोडकर उसकी व्युतपात्ति करनेवाले और शब्दके खोखलोंको चूंथनेवाले ही पण्डित बहुधा दीख पडते हैं । वे विद्वान वे तत्वज्ञ तो बहुत ही विरले है जो निर्भयता और निःस्वार्थताके साथ वस्तुका वास्तविक विवेचन करते हों । इन स्वार्थियोंकी लीलासे शब्दकी गंभीरता और

उनके जीवनको समझाने वाली कुंजी तो कर्मोकी लोप हो गई है।

हे प्रभो! अब इस कुंजीका जाननेवाला कोई दिखाई नहीं पडता। इन भेदोंको समझाने वाला कोई नहीं मिलता और इसीसे यह बात प्रसिद्ध की गई कि इस कालमें पूर्वका ज्ञान नष्ट हो गया है, मन पर्येय ज्ञान किसीको नहीं होता, कोई अपने पूर्व भव नहीं जान सकता। अब तो केवल शास्त्रका मनमाना अर्थ करनेवाले ही रह गये है। हा! कैसी खेदजनक स्थिति? नाथ! जब सब ही नष्ट हो गया तब आप ही कैसे बचे? क्या आत्मापर—आत्माकी अनन्त शक्तियोंपर क्षुद्र देश काल असर कर सकते हैं? क्या कालके ऊपर किसीका भी साम्राज्य नहीं चल सकता? यदि नहीं ही चल सकता तो हे नाथ! सबके भक्षण करनेवाले कालका भी आपने कैसे काल कर दिया? जबतक आप विद्यमान हैं—जब तक देश कालसे अपरिच्छिन्न आत्मशक्तिवाले आप सरीखे महात्मा मौजूद हैं—तबतक आपका प्राप्त किया हुआ पद यह मनुष्य अपनी सेवा द्वारा प्राप्त कर सकता है, ऐसी मुझे पूर्ण श्रद्धा है। इस श्रद्धाको भले ही कोई नास्तिकताकी उपाधि प्रदान करे पर मेरे हृदयमेंसे यह श्रद्धा कभी नहीं खिसकनेकी है। महाराज! यह कैसे हो सकता है कि आत्माका स्वाभाविक गुण नष्ट हो जाय? फिर ज्ञान, अथवा पूर्व, जो ज्ञानको छोडकर भिन्न कुछ वस्तु नहीं है, कैसे नष्ट हो सकता है? और जब आत्माकी प्रधान शक्ति ही नष्ट हो जायगी तब बचेगा ही क्या? देखिये तो—भावस्य णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो अर्थात् सत्का विनाश और असत्का उत्पाद कभी नहीं होता और यदि ऐसा ही होने

जगे तो बड़ा भारी दोष आकर उपस्थित होता है। आपके ही अखण्डसिद्धान्तमें बाधा उपस्थित होती है। इस लिए जहांतक मैं समझा हूं कह सकता हूं न तो ज्ञान नष्ट हुआ है और न पूर्व ही। उसी तरह न ज्ञानी ही नष्ट होगये है। जो मनुष्य ऐसा मानते हैं उनके लिए तो सचमुच ही सब नष्ट होगया है, यह मैं अवश्य मानता हूं। आत्माकी अनन्तशक्तिमें, अनन्तबलमें–अनन्तवीर्यमें जिसे प्रतीति–विश्वास–श्रद्धा–नहीं है उसके लिए तो सब कुछ नष्ट होगया है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पर सबके लिए सब नष्ट होगया है यह नहीं माना जा सकता। यह केवल कल्पना है।

जो मनुष्य यह मानता है कि यह वस्तु कभी मिलेगी ही नहीं उसे तो वह कभी नहीं मिलेगी। क्योंकि यह कहावत प्रसिद्ध है कि रोता जाय और मरेकी खबर लेकर आवे।

हे अधमोद्धारक! इसमें यदि मेरी भूल हो तो उसे मुझे समझाइये। पर इस विषयमें तो मेरा अन्तःकरण ऊपरके विचारोंसे ही सहमत होता है। और फिर भी यदि भूल हो तो फायदेकी ओर दृष्टि रखनेवालेकी भूल होती ही है। इस लिये चिन्ताकी कुछ बात नहीं। हे प्रभो! लिखनेके लिए तो बहुत कुछ है, पर वह आपपर अविदित नहीं है। यह सब आप जानते हुए भी मौन साधे हुए है। इसीलिए मुझे लिखना पडा है।

हे भगवन्! मै अज्ञानी हूं–बालक हूं–छद्मस्थ हूं। इस लिए मेरे लिखनेमें बडे भारी अविनयके होनेकी संभावना है। बालककी तरह बोलनेमें भी वाचाल होनेका भय बना हुआ रहता है। इस लिए आप उस तरफ लक्ष न देकर मेरे हृदयके भावोंकी ओर दृष्टि क-

रना । हे नाथ ! जैसी स्थिति अब है उसे बहुत समयतक रहने देना यह सारे धर्मका नाश करना है । इस लिए आप, रक्षा करनेवाले अपने हाथोंको अब चलाइये—उनसे काम लीजिए । अपनी सत्यवाणी-रूप अमृतका हमें पान कराइये । हमारी आखोंका पटल दूर कीजिए । अज्ञानके समुद्रमें गोता खानेवाले हमारे भाइयो—अपने बालकोंपर कृपादृष्टि कीजिए । इस भरतमें—इस हृदयमन्दिरमें पधारनेके लिए हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिए ।

हमारे कर्त्तव्यकी समाप्ति ।

हम जैनी है । हमे अपने जैनी होनेका बड़ा अभिमान है । हमसे कोई पूछता है कि तुम कौन हो ? तब उसे हम बड़े गर्वके साथ उत्तर देते है कि हम जैनी हैं । पूछनेवाला जब हमसे हमारे धर्मके समझनेकी इच्छा प्रगट करता है तब हम उसे समझाते है कि हमारा धर्म बडा पवित्र है, ससारमें हमारे धर्मके बराबर पवित्र और आत्मकल्याणका मार्ग बतानेवाला कोई दूसरा धर्म नहीं है । उसमें कहा गया है कि कभी पापकर्म मत करो, संसारके छोटे और बडे सब जवोंके साथ मित्रता करो, कभी किसी जीवकी हिंसा मत करो, हिंसा तो दूर रहे, कभी उन्हें छोटीसे छोटी भी तकलीफ न पहुंचाओ, जिस तरह हो सके, जितना हो सके, दूसरोंका उपकार करो । किसीका, चाहे वह फिर तुम्हारा जानी दुश्मन भी क्यों न हो, अनिष्ट—अपकार—मत करो, न करना तो दूर रहे, पर कभी अपने भावोंमें भी किसीके बुराईकी भावना—विचार—न करो । राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया और लोभ ये आत्माके जानी-

दुश्मन हैं—उसे कुगतिमें भ्रमण करानेवाले हैं। इनके वश अपने आत्माको कभी न होने दो और इन्द्रियोंके विषयोंमें कभी आसक्ति मत करो। आदि। इतने कहनेका सार थोडेमें यह कहा जा सकता है कि आत्माको सदा पवित्र रक्खो और पवित्र काम करो। यही कल्याणका मार्ग है—आत्माके सुधारका उपाय है। आत्माके पवित्र रक्खे विना कोई काम लाभदायक नहीं हो सकता। इत्यादि। यही जैनमतका सार और असली उद्देश्य है। ये बातें पूछनेवालेको हम सुना जाते हैं और पीछे बहुत कुछ अपनी तारीफके ढेर लगा देते है।

इसमें सन्देह नहीं कि ये सब बातें सही है और इसपर चलने-वालेका बहुत कुछ हितसाधन हो सकता है। हम यह भी कह सकते हैं कि यद्यपि कितनी बातें इनमें ऐसी भी हैं जो सर्व साधारण मतोंमें पाई जाती है। परन्तु कितनी बातें ऐसी है जो जैनमतके सिवा कहीं विशदरीतिसे नहीं मिलतीं। जैसे अहिंसा। अहिंसाका सब मतमें विधान है, इसमें सन्देह नहीं। पर जैनमतमें मानी हुई अहिंसा-के साथ अन्यमतमें मानी हुई अहिंसाकी तुलना करनेसे जमीन आशमानका अन्तर दीख पडेगा। अस्तु। जैनमत कल्याणका मार्ग है सही। पर इससे हम भी कुछ लाभ उठाते है—उसके उद्देश्य पर चलते हैं या नहीं? इसका विचार करना जरूरी है। हमारा यह गर्व कि जैनमत बहुत उत्तम धर्म है, हमारे लिए भी कुछ काम आता है या नहीं? या केवल दूसरोंको समझानेके लिए ही हम इतनी बातोंका सिलसिला बांध देते हैं?

मुझे जहांतक अपने भाइयोंकी अवस्थाका परिज्ञान हुआ है, जहांतक मैंने उनके कर्त्तव्यकी समाप्तिपर लक्ष्य दिया है, उससे मैं यह निःसन्देह कह सकता हूं कि उनका यह अभिमान-यह अपने धर्मकी उत्तमता बतलाना—केवल दूसरोंके लिए है। हजारोंमें शायद ही कोई एक ऐसा निकलेगा जो स्वयं भी इन बातों-पर चलनेके लिए कटिबद्ध रहता हो। हमारे भाइयोंके कर्त्तव्यकी समाप्ति तो बस इतनेहीमें हो जाती है कि वे दिनमें एक वक्त मन्दिरमें जाकर दर्शन कर आते हैं। वे दर्शन करते हैं अवश्य, पर किस लिए? पुण्य सम्पादनके लिए। उनके हृदयमें यह विश्वास है कि दर्शन करना पुण्यका कारण है। पर वे यह नहीं जानते कि हमारे ऋषियोंने किस लिए प्रतिमाका दर्शन करना बतलाया है? इस बातका उन्हें स्वप्नमें भी खयाल नहीं होता कि हम जिनके दर्शन करते हैं वे अपने अपूर्व गुणोंसे संसारके आदर्श हुए हैं। उन्होंने उसके हितकेलिए सतत प्रयत्नकर उसे कल्याणका पथ प्रदर्शन कराया है, जीवमात्रका उपकार करनेके लिए कठिनसे कठिन दुःख उठाया है और अन्तमें कर्मोंका नाश कर अपने आत्माको अजर अमर बना लिया है। उनके ये गुण हमें भी प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिए। अपने आत्माको उन आदर्शोंके पथपर लगाकर उसे पवित्र बनाना चाहिए। संसारके दुःखी जीवोंका—अपने भाइयोंका—हमें उपकार करना चाहिए। आदि। हमारा इस बातपर बिल्कुल लक्ष्य नहीं। हम तो दर्शन करनेका केवल इतना ही मतलब समझे हुए हैं कि उससे पुण्यबन्ध होकर हमें स्वर्गकी प्राप्ति होगी। हमें इसकी जरूरत नहीं कि हम दूसरोंके उपकारके लिए उपाय करें।

हमारा कर्त्तव्य समझिए, परोपकार करना समझिये, अपने धर्मपर चलना समझिये या पुण्यकर्म समझिये, जो कुछ समझिये वह केवल इतना ही कि प्रातःकाल एक वक्त भगवान्‌के दर्शन कर आना है। दर्शन भी कैसा? चाहे उस वक्त हमारे भावोंमें पवित्रता न हो, चाहे हमारा उपयोग उस वक्त कहीं अन्यत्र लगा हो, चाहे दृष्टि पापवासनाकी तरफ झुकी हो, चाहे हम भारीसे भारी आकुलित अवस्थामें हों, चाहे हम मन्दिरकी रमणीय वस्तुओंके अवलोकनमें अपने उपयोगको लगा देते हों और ऐसे समयमें चाहे फिर हमें पुण्य बन्ध भी न हो। परन्तु इन बातोंकी हमें कुछ परवा नहीं। हम तो दर्शन कर आनेको ही सब कुछ समझते हैं। हमें इस विचारकी जरूरत नहीं कि दर्शन करनेके अतिरिक्त भी कुछ हमारा कर्त्तव्य है। इसमें सन्देह नहीं कि भगवानका दर्शन करना उत्तम न हो। उत्तम है और अवश्य कर्त्तव्य है। पर विचारके साथ। महर्षियोंने दर्शन करनेका केवल इतना ही आशय रक्खा है कि भगवानको देखकर हम उनके अपूर्व परोपकारता आदि गुणोंका स्मरण करें और फिर उनके अनुसार अपनेको भी उन गुणोंका पात्र बनावें। दर्शन करनेका अभिप्राय जो केवल इतना ही समझे हुए है कि उससे पुण्यबन्ध होता है और इसी लिए वे दर्शन करते हैं तो वे भूल करते हैं। किसी तरहकी आशासे धर्मकाम करना इस विषयमें हमारे ऋषियोंकी सहानुभूति नहीं है। वे उसे अच्छा नहीं समझते। हमें परमात्माके दर्शनसे उनके गुण प्राप्त करने चाहिएं। हमें यह लिखते हुए अत्यन्त दुःख होता है कि हम अपने मनुष्य जन्म और जैनधर्मके प्राप्त करनेकी समाप्ति केवल परमात्माके दर्शनसे—देखनेसे—समझ बैठे हैं। हमें अपने

ऋषियोंके कर्त्तव्योंपर कुछ भी विचार नहीं आता कि उन्होंने अपने जीवनको कैसे कामोंमें लगाया था। हमारी आंखोंके सामने ऐसे अनेक आदर्श उदाहरण विद्यमान है जिनसे कि हमारे पूर्व पुरुषोंकी उदारता और परोपकारताका पूर्ण पता लगता है। उन्होंने अपनी जातिके लिए—अपने भाइयोंके लिए—अपने जीवनतककी कुछ परवा नहीं की थी। पर आज तो हमारे देश और जातिके भाइयोंकी बहुत पतितावस्था है तब भी हमें कुछ नहीं सूझता। उनके दु.खपर बिल्कुल दया नहीं आती। हम जानते हैं कि जैनधर्मका उद्देश्य जीवमात्रपर दया करनेका—उनके दुःखमें सहायता देनेका—है, पर वह केवल हमारे लिए कथन मात्र है। उसपर चलना यह हमारे लिए कुछ आवश्यक नहीं। हम दूसरोंको समझावेंगे तब जैनधर्मकी बेशक खूब जी जानसे तारीफ करेंगे पर उसपर हम भी चलते है या नहीं इसका कभी विचार भी नहीं करेंगे। हम दूसरोंको कहते हैं कि हमारा धर्म बड़ा ही दयामय है, पर हममें कितनी दया है उसका कुछ जिकर नहीं। हमारा धर्म संसारमात्रका कल्याण करनेवाला है, पर उसे पाकर हमने भी कुछ अपना कल्याण किया है या नहीं ? हमारे धर्ममें बड़े बड़े आदर्श और परोपकारी पुरुष होगये है, पर हममें भी कुछ उपकारबुद्धि है या नहीं ? हमारे धर्ममें पापकर्मके न करनेपर खूब जोर दिया गया है, पर हम दिनरात जो हिंसा, झूठ, चोरी, मायाचार, दगाबाजी करते हैं, जहातक बनपड़ता है दूसरोंको तकलीफ पहुचा कर अन्याय—अनर्थ—करते हैं, अपने ही भाइयोंके साथ नहीं करनेका काम करते है, बुरेसे बुरे और नीचसे नीच काम करनेसे भी हम बाज नहीं आते हैं,

लोगोंको धोखा देकर ठगते हैं, विश्वास देकर उसका कर डालते है, सीधे साधे और भोले भाले मनुष्यको अपने जालमें फंसाकर उसपर आपत्तिका पहाड ढहा देते हैं, बाहरी ढोंगसे धर्मात्मा बनकर लोगोंको अपने पञ्जेमें फंसानेकी कोशिश करते है, एक एक पैसेके लिए हजारों झूठी प्रतिज्ञा कर डालते है, गरीबोंको तकलीफ देनेमें कुछ कसर नहीं रखते है, दिनमें हजारों बार झूठ बोलते है, चोरी करते हैं, ऊपरसे अहिंसा-के माननेका ढोंग बनाकर भीतर ही भीतर मायाचार—छल—कपटके द्वारा लोगोंपर बुरी तरह वारकरके उनको दीन दुनियासे खो देते है, अपनी माता और बहनोंपर बुरी निगाह डालनेमें हमें लज्जा नहीं आती है, हम भगवानके दर्शन करनेका बहाना बनाकर वहा माता बहनोंके पवित्र दर्शन करते हैं, करते हैं भगवानकी पूजन, पर हमारा ध्यान रूपकी हाटके देखनेमें लगा रहता है, हम मन्दिरों-को धर्मायतन कहते हैं पर वहां पाप करनेमें कुछ लज्जित नहीं होते, हम लोगों पर यह जाहिर करते हैं कि हम बड़े धर्मात्मा हैं पर उसकी आड़में हम चरम दर्जेका अन्याय करनेसे नहीं हिचकते, हम अभिमान करते है, पर अभिमान कैसा ! जिससे जाति और देश धूलमें मिल जाय, हम निर्बलों पर अत्याचार करते हैं पर उसे बुरा नहीं समझते, आदि, महापापसे बचनेका कुछ प्रयत्न करते हैं या नहीं ? हमारा धर्म सब जीवोंके साथ मित्रताका उपदेश देता हैं, पर हम भी किसीके साथ मित्रता करते हैं या नहीं ! राग, द्वेष क्रोध, मान, माया, लोभ, ये आत्माके पूर्ण शत्रु कहे गये हैं पर इनसे हम भी अपनी रक्षा करते हैं या नहीं ? अपने आत्माको सदा पवित्र

रक्खो और पवित्र काम करो, पर हम अपनेको कुछ पवित्र करनेकी अथवा पवित्र कामके करनेकी कोशिश करते हैं या नहीं ? इन बातोंपर क्या कभी हमारा ध्यान जाता है ? कभी विवेकबुद्धिका विकाश होता है ? मै कहूंगा, कभी नहीं । क्योंकि हमने तो अपने कर्त्तव्यकी समाप्ति केवल सुबह दोचार मिनटके लिए मन्दिरमें जाकर परमात्माकी मूर्त्तिका निरीक्षण करने मात्रसे समझ रक्खी है न ? फिर क्यों हमें इन बातोंपर विचार हो ? क्यों हम अपनेको अधिक कष्टके गड्ढेमें डालें ? देश या जाति कल रसातलमें पहुचते हो तो वे हमारी ओरसे आज ही पहुंच जायँ । हमे क्या ज़रूरत जो हम दूसरोंकी बला अपने शिरपर उठावें ? हाय ! समयकी बलिहारी है ! नहीं तो क्यों आज हम लोगोंमें इतनी संकीर्ण बुद्धि और अन्यायपरता होती ? हमारे पूर्वजोंने ससारके हितके लिए कोई काम करना बाकी नहीं रक्खा था । पर हमें सब कण्टकसे दिखाई पड़ते हैं ।

पाठक ! आप विचारके साथ अपनी दृष्टिको दूर तक फैला कर देखेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि हमारे भाइयोंकी कैसी भयानक परिस्थिति है । उनका कर्त्तव्य तो कितना था और वे क्या समझे हुए बैठे हैं । क्या उनकी इस भूलका कुछ ठिकाना है ? क्या कभी वह पवित्र दिन आवेगा जब कि हमारे भाई अपनी इस भूलको जानकर सारे संसारके हितका उपाय करेंगे ? परमात्मा ! दयासिन्धु ! ! उन्हें सुबुद्धि प्रदान कीजिए । जिससे कि वे अपने कर्त्तव्यको समझें और उसीके अनुसार चलनेके लिए कार्यक्षेत्रमें निर्भय होकर कूद पड़ें ।

भोले भाइयो ! अब अपनी इस भोलपनको छोडो। इस भोलप-नसे—इस हृदयकी अनुदारतासे—हम बहुत पतित हो चुके हैं। हमें अपने कर्त्तव्यका ज्ञान नहीं रहा है। आप जो अपने हृदयमें यह निश्चय किये हुए बैठे हो कि परमात्माके दर्शन करनेसे ही हमारे कर्त्तव्य की समाप्ति हो जाती है यह आपकी नितान्त भूल है। मैं कहूंगा कि संसारके बुराई भलाईकी जितनी जबावदारी आपपर है उतनी किसी पर नहीं है। क्योंकि यह आपहीके धर्मका पवित्र सिद्धान्त है कि 'सत्वेषु मैत्री' अर्थात् जीवमात्रपर प्रेम करो। और आपके तीर्थकरोंने भी सारे संसारके लिए कल्याणका मार्ग बताया है। फिर आप ही कहें कि जो सारे संसारको अपना समझकर उसे कल्याणके मार्गपर लाना चाहता है तब उसे उसके हित वा अहि-तका जबाबदार होना पडेगा या नहीं ? अपनी गहरी भूलको छोडो और संसारमात्रके हितमें लगो, यही हमारी आपसे प्रार्थना है। आपके लिए अभी बहुत कुछ करना बाकी है। इसलिए केवल पर-मात्माके दर्शनसेही अपने कर्त्तव्य समाप्ति मत समझो।

कञ्चन।

(सामाजिक आख्यायिका)

(४)

कामवासना।

रातके एक बजेका समय है। प्रकृति बिल्कुल निस्तब्ध है। सारा शहर निद्रा देवीकी गोदमें सुखकी नींद सोया हुआ है। पूनमचन्द जिस मकानमें रहते हैं उससे कुछ ही दूरपर एक वेश्याका घर है। इस समय इस निस्तब्धतामें भी कमला मधुर और मनोहर गाना गा रही है। गाना बहुत उत्तम है। उसके सुननेवालेका चित्त बहुत जल्दी उसकी ओर आकर्षित हो जाता है। यदि हम इस गानेका गन्धर्वगानके साथ मिलान करें तो संभव नहीं कि वह उससे किसी अंशमें कम हो।

गाना अपनी प्रतिध्वनिसे आस पासके गृहोंमें गूंजता हुआ हवामें लीन हो जाता था। पूनमचन्द सोते थे। एका एक गानेकी मनोहारिणी आवाजने उनकी नींदमें बाधा डाल दी। वे जग उठे। उनका ध्यान गानेकी ओर खिंचा। उसकी सुन्दरताने उन्हें अधीर बना दिया। निद्रा लेना अब उन्हें कठिन होगया।

उनकी स्त्रीको मरे आज तीन वर्ष हुए हैं, पर इस समय उनका शोक बिल्कुल ताजासा दीख पड़ता है। जान पड़ता है गाना सुनकर उन्हें उनकी स्त्रीकी याद हो उठी है और इसीसे वे एक साथ इतने अधीर होगये हैं। आज उन्हें लज्जाप्रेमने फिर धर दबाया है। जैसे जैसे समय अधिक अधिक बीतता है वैसे

वैसे उनकी उत्कण्ठा प्रबल हो रही है। उसके पूरी करनेका उनके पास कुछ साधन नही दीख पड़ता। इससे उनके मनोविकार और भी भयंकरता धारण कर रहे हैं।

वृद्धावस्थामें यद्यपि इंद्रियां शिथिल हो जाती हे, उनमें किसी-तरहकी स्फूर्ति नहीं रहती। पर इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि वृद्धावस्थाके मनोविकार पहलेसे भी कहीं अधिक उत्तेजित हो जाते है। युवा पुरुष यदि हिम्मत करे तो उन्हें दबा सकता है, पर वृद्ध पुरुषकी यह ताकत नहीं कि वह अपने हृदयके उदीप्त विकारोंका दमन कर सके।

पूनमचन्द भी वृद्ध हैं, पर आजके गानेनें, जो कि उनकी स्त्रीके मधुर स्वरसे मिलता हुआ था, उन्हें विकल कर दिया। इस ढलती उमरमें आज फिर उन्हें अपने विवाहका ध्यान आया। उनके हृदयमें बुरे भले विचारोंका बड़ा भारी घमासान युद्ध मचा। वे कभी तो जाति वा लोक लज्जाके भयसे विवाहके विचारको रद्द कर डालते थे और जैसे ही उन्हें उस सुन्दर गानेकी आवाजका ध्यान आता तब फिर विवाहके लिए तैयार हो उठते थे। बहुत तर्क वितर्कके बाद उन्होंने निश्चय कर लिया कि जो कुछ हो विवाह करना और अवश्य करना। फिर चाहे लोग बुरा ही कहें? कहांतक वे बुरा कहेंगे? एक दिन, दो दिन, दश दिन, महीना, दो महीना, वर्ष दो वर्ष। आखिर तो उसकी भी सीमा है। और फिर उससे मेरा बिगडेगा ही क्या? एकके कामको एक बुरा कहता है और एक भला। पर इस भयसे क्या अपना विचार छोड देना चाहिये? नहीं। हा संभव है जातिके लोग

कुछ गडबड करें। पर वे भी एक वक्तके भोजनसे ठण्डे किये जा सकते हैं। फिर क्यों मै अपना विचार बदलूं।

विवाहमें रुपया बहुत कुछ खर्च करना पडेगा। अस्तु। इसकी कुछ परवा नहीं। हजार, दो हजार, चार हजार, दश हजार भी क्यों न खर्च हो जायँ, करूगा। पर विवाह करना कभी नहीं छोडूगा। रूपया तो मैने अपने आरामके लिए ही कमाया है। फिर जब उनसे मै ही लाभ नहीं उठाऊगा तब क्या मैंने यह मजूरी दूसरे-के ही लिए की है? वे बडे मूर्ख हैं जो पास पैसा होते हुए भी आनन्दोपभोगसे वञ्चित रहते हैं। मुझे यह मन्जूर नहीं। मै अपने पैसाका उपभोग करूंगा। लोग कहते हैं कि वृद्धावस्थामें विवाह करना बुरा है, पर यह उनकी भूल है। वे अपने स्वार्थकी ओर देखते तो कभी ऐसा नहीं कहते। अपना भला सब चाहते है फिर मैं ही क्यों दुःख देखूं।

पूनमचन्द्रने अपनी बुरी वासनाके वश हो बुराई भलाईकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। जातिकी और लोक लज्जाकी, कुछ परवा न रक्खी। सचमुच जब मनुष्य कामके पाशमें बद्ध हो जाता है तब उसे अपनी, अपनी जातिकी, और अपने देशकी हानि लाभका कुछ विचार नहीं होता है। हो कहां से, जब कुछ विवेक बुद्धि हो तब ही न? सो उनकी विवेकबुद्धिको तो काम पहले ही हर लेता है।

पूनमचन्द्रका अभी एक बलासे तो पिण्ड छूटा ही नहीं है कि एक और बला स्वयं उन्होंने अपने ऊपर उठाली है। अभी उन्हें अपने सुपुत्र मोतीलालका विवाह करना तो बाकी ही है। उसके लिए

ही उन्हें कितनी दौड धूप करनी पडी है। फिर न जाने अपने लिए वे क्या करेंगे ? मनुष्य अपने स्वार्थके पीछे सब कुछ भूल जाता है। इसमें कुछ सन्देह नहीं । ठीक यही हाल पूनमचन्दका हुआ है । आइये पाठक! हम और आप भी पूनमचन्दके विवाहका तमाशा देखें।

---

(५)

विपत्ति।

मोतीलालका विवाह हुए आज दो वर्ष बीत गये, पर उसने आज-तक अपनी स्त्रीके साथ कभी प्रेम संभाषण नहीं किया । हम उसके चालचलनका हाल पहले लिख चुके हैं। पाठक जान सकेंगे कि जिसका हृदय किसी दूसरेके वश है, वा वह स्वयं अपनेको दूसरेके लिए सौंप चुका है, फिर उसे अपने घरकी कुछ खबर नहीं रहती। उसे अपनी सुन्दर और सुखद वस्तु भी बुरी जान पडती है। आपने यदि यशोधर महाराजकी जीवनी पडी है तो आपको अमृतमतीकी कथा इसके लिए उत्तम आदर्श जान पडेगी। मोतीलाल अपने हृद-यको दूसरेके लिए सौंप चुका है। अब वह कञ्चनपर कैसे प्रेम कर सकता है ? बेचारी कञ्चन चाहती है कि मैं एक वक्त अपने प्रा-णप्यारेसे इस बातका कारण समझूं कि वे मुझसे क्यों नाराज है ? पर मोतीलाल उसे इतना अवसर भी नहीं देता । उसके लंगोटिये यार और उसे दिनरात बुरी बातें सुझाया करते हैं, जिससे वह और भी निर्दयता धारण किये जाता है।

बेचारी कञ्चन जैसे जैसे बडी होती जाती है वैसे वैसे चिन्ता और मानसीक विकारोंकी ज्वालासे उसका हृदय जला जाता है। वह

चाहे दरिद्र और स्वार्थीके घरमें भले ही उत्पन्न हुई हो, पर उसमें कुलीनता है। वह अपने कुलकी मर्यादा रखना जानती है। इसलिए वह दुःख भोगती है पर उसकी परवा नहीं करती। सचमुच उसमें शिक्षाकी सुगन्धने उसके कञ्चन नामको सार्थक कर सोने और सुगन्धकी कहावतको चरितार्थ करदी है।

जब उसे अपने पिताकी स्वार्थताका ध्यान आता है तब उसका हृदय–कोमल हृदय–फटने लगता है। कभी कभी तो उसकी हालत यहातक विगड जाती है कि उसे खाना पीनातक जहर हो जाता है। उसे रोनेके सिवा कुछ सूझता ही नहीं। कभी वह अपने बुरे कर्मको धिक्कारती है, कभी परमेश्वरसे प्रार्थना करती है, पर उसे किसी तरह शान्ति नहीं मिलती–उसका दुःख कम न होकर बढ़ने ही लगता है।

हम केवल कञ्चनहीकी हालत क्यों कहें? आज तो हमारी जातिभरकी यही हालत हो रही है। वह न गुणोंका विचार करती है, न बुद्धिपर ध्यान देती है, न चालचलन पर खयाल करती है और न अवस्थाकी मीमासा करती है। तब करती है क्या? केवल पैसा देखकर फिर वह चाहे मूर्ख हो, कुरूप हो, वृद्ध हो, बालक हो अथवा बीमार हो उसके साथ अपनी प्यारी पुत्रिया विवाह देती है। यों कहो कि उन्हें नरकयातना भोगनेके लिए ऐसोंके गले लटका देती है।

इन दुराचरणोंसे हमारी जातिका दिनों दिन भयंकर ऱ्हास हो रहा है और अभी होगा। क्योंकि अभी इन दुराचारोंके रोकनेका कुछ भी उपाय नहीं किया जाता है।

कञ्चन-कोमलहृदया कञ्चन--दुखी है--बहुत दुखी है। उसे अपना जीवनतक भी भारसा प्रतीति होता है। उसे आशा नहीं कि अब कभी मुझे प्रियतमके साथ सुखसंभाषणका अवसर मिलेगा। वह मारे लज्जाके अपनी मनोवेदनाओंको दूसरोंपर भी जाहिर नहीं कर सकती। उसे इस वातका अधिकार भी तो नहीं है। कञ्चन! तू अभागिनी है। तेरा पापकर्म वहुत तीव्र है। इसी लिए तेरे भाग्यमें सुख नहीं। तुझे आजतक अपने प्रियतमके साथ संभाषण करनेका सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ। अपने कियेका फल भोगना यही अब एक मात्र तेरे लिंए शान्तिका उपाय हैं।

एक दिन कञ्चन वैठी हुई थी कि मोतीलाल किसी कामके लिए उसकी कोठडीमें आया। कञ्चनने उठकर साहस पूर्वक उसका हाथ पकड लिया और वह कहने लगी कि--

प्राणनाथ! मुझ अभागिनी पर आप किस लिए नाराज हैं? मैंने आपका ऐसा कौनसा भारी अपराध किया है जिससे मै आपकी कृपापात्री आजतक नहीं हुई? मुझे समझाइये। मुझे दुःख देखते देखते वर्पके वर्ष बीत गये, पर आपने मेरे दुःखकी कुछ भी वात नहीं पूछी? वतलाइये तो पतिको छोड़कर स्त्रीका और कौन आधार हो सकता है? वह किसके पास जाकर अपनी दुःख कहानी सुना सकती है?

मोतीलाल--हाथ छोड़ो। मुझे कामकी जल्दी है।

कञ्चन--आप तो जरासी देरके लिए ही इतनी उतावल करने लग गये? फिर मेरी हालत तो देखिये कि मै दिनरात चिन्ताकी ज्वालामें जली जाती हूं, उसकी भी आपको कुछ खवर है? मेरी वातोंका जबाब तो दीजिए कि आप मुझे क्यो नहीं चाहते? विना कुछ

अपराधके एक दीन अबलापर ऐसा घोर अत्याचार करना क्या आपको उचित जान पड़ता है ?

मोतीलाल–मुझे अभी इन सब बातोंके उत्तर देनेकी फुरसत नहीं है । इस समय मेरा हाथ छोड दो ।

कञ्चन–प्यारे ! आप मुझे कुछ भी कहें पर जबतक आप मेरी बातोंका उत्तर न देंगे तबतक मै आपको न जानें दूगी । मैने बहुत दुःख उठा लिये । अब मै नहीं सह सकती । आप देखते नहीं कि मेरी शारीरिक दशा कैसी बिगड गई है ? पर फिर भी उसपर आपको दया नहीं आती ।

मोतीलाल–तो क्या यह जबरदस्ती है जो मेरा हाथ छोडना नहीं चाहतीं ? छोड़ो । मुझे बहुत देरी होगई है । हा तुम्हारी बातोंका उत्तर फिर कभी दूगा ।

कञ्चन–नाथ ! आप यह क्या कहते हैं ? मैं तो आपसे केवल प्रेमकी भिक्षा मांगती हूं । मुझे जबरदस्ती करके क्या करना है ? मै आपका हाथ छोडनेके लिए तैयार हूं । पर यह कह दीजिए कि मुझपर कृपा क्यों नहीं करते ? मुझसे क्या ऐसी भारी भूल बनपड़ी है ? बतलाइये मै उसकी माफी मागू ?

मोतीलाल–जान पडता है कि तुम बिना उत्तर पाये मेरा हाथ न छोडोगी । आखिर होतो स्त्री ही न ? अस्तु । सुनो–मै तुम्हारी सब बातोंका उत्तर देकर मामला तय किए देता हू । तुम मुझे चाहती हो–मुझपर प्रेम करती हो–यह सही है । पर मै तुम्हें नहीं चाहता । तुम पूछोगी, क्यों ? इसका मेरे पास कुछ जबाब नहीं है । तुम कहोगी फिर विवाह किस लिए किया था ? इसका उत्तर पिताजी दे सकते

है । बस यही मेरा उत्तर है । अब इसपर जो तुम्हें उचित जान पड़े वह करो । पर मै तुमसे प्रेम नहीं करता ।

सुनते ही बेचारी कञ्चनके शिरपर वज्रसा गिर पड़ा । उसका सारा शरीर सन्न होगया । वह मोतीलालका हाथ छोड़कर अलग होगई । उसका शिर घूमने लगा। दुःख और चिन्ताके आवेगसे वह अपनेको न सम्हाल सकी। वह एक दम धडामसे पृथ्वीपर गिर पड़ी । मोतीलालका पत्थर हृदय तब भी नहीं पसीजा । वह अवसर पाकर वहांसे चलता बना । मूर्खता! तुझे सो बार नमस्कार है ।

---

(६)

विपत्तिपर विपत्ति ।

मैं बहुत दुःख उठा चुकी । अब मुझसे यह दारुण दशा नहीं भोगी जाती । परमात्मा ! मै अभागिनी हूं । अनाथिनी हूं । कर्मोंकी मारी हुई हूं । मेरी रक्षा करो—मुझे बचाओ । विपत्तिके अथाह समुद्रमें बही जा रही हूं, मुझे सहारा दो । आपने पापीसे पापी और अधमसे अधमका उद्धार किया है फिर मेरा–दुःखिनीका–दुःख क्या दूर नहीं करोगे ? आपका स्मरण करके भी जब बहुतेरे सुखी होगये है तब मुझे, जो दिन रात आपका ध्यान किया करती हूं, सुखी न करोगे ? मेरे प्यारेने मुझे छोड़दी है । पर क्यों ? यह मै नहीं जानती । आप मुझे बतलाइये कि मेरा क्या अपराध है ? क्योंकि आप सर्वज्ञ है । सबके जानने वाले है । फिर मैं उसका प्रायश्चित्त कर शुद्ध हो लूं । हाय ! सचमुच मै पापिनी हूं । मैने बहुत पाप किये हैं । इसीसे मुझे यह दुःख–भयंकर दुःख–भोगना पड़ा है ।

प्राणनाथ ! यदि मैं आपकी दृष्टिमें अपराधिनी ही हूं तो भी इतनी बुरी तो नहीं हूं कि आप मुझसे बोलनेमें भी घृणा करें ? मुझसे एक वक्त तो प्रसन्न चित्त होकर आप संभाषण कीजिए। मैं इतनेहीमें अपनेको सौभाग्यवती समझ लूंगी। केवल बोलने मात्रसे तो मैं आपका कुछ छीन नहीं लूंगी। मेरा जीवन--यह पापमय जीवन सफल हो जायगा। जीवनसर्वस्व ! मैं हिन्दू कुलमें--पवित्र कुलमें--उत्पन्न हुई हूं। आप जानते हैं कि हिन्दू रमणीरत्नोंका एक मात्र आराध्य देव उनका पति होता है। उसे छोडकर न तो कोई उसका आराध्य है और न जीवनमें सहारा देनेवाला है। आप मेरे प्राण हैं। इस भयंकर अवस्थामें भी जो मैं इन पापी प्राणोंको धारण किये हुई हूं वह केवल आपके सहारेपर। भला ! आप ही विचारें कि जब मुझे आप ही अपने चरणोंकी छायाका आश्रय न देंगे तब और कौन मेरी रक्षा करेगा ? नाथ ! मैं आपकी एक दासी हूं। मुझपर दया करो। मुझे इस विपत्तिसे उबारो। मैं आपकी अपराधिनी हूं तो मुझे क्षमा करो और मुझे रहनेको अपने हृदयमें जगह दो। प्यारे ! क्या सचमुच आप मेरी प्रार्थना न सुनेंगे ? मुझे सहारा देकर मेरी रक्षा न करेंगे ? मैं हाथ जोडती हू। पावों मैं पडती हू। मुझे बचाओ। मैं केवल आपकी कृपाकी भूखी हूं। मुझे धन दौलतकी कुछ जरूरत नहीं। प्यारे ! एक वक्त प्रसन्न होकर अपने श्रीमुखसे--सुन्दर मुखसे--बोल लीजिए। मधुर हँसी हँस लीजिए। बस यही चाहती हूं। जीवनेश्वर ! आप मुझे नहीं चाहते न सही पर प्रेमकी दृष्टिसे एक वक्त मेरी ओर निहार तो लिजिए। इतनेमें तो आपका कुछ नहीं बिगड जायगा। क्या विपत्तिकी मारी एक अभागिनीपर

इतनी भी दया करना आप बुरा समझते है । आपके हृदयमें इतनी भी उदारता नहीं है ? अस्तु । आप स्वतंत्र हैं । अपने हृदयके अधिकारी है । मेरा आपपर कुछ जोर नहीं । हिन्दू रमणियोंके लिए यही आज्ञा है कि वे पतिके कहनेको कभी नहीं टालें । मैं भी इसे पालूंगी । यदि इसमें मुझे और भी अधिक दुःख सहना पडे तो सहूंगी—जीवन देना पडे तो दूंगी। पर आज्ञाका—ऋषियोंकी अमोलिक आज्ञाका--अवश्य पालन करूंगी । मै अबला हू फिर स्वतंत्र होकर प्रबला कैसे हो सकती हूं ? आहा ! इस धर्मको धन्य है जिसे पालन कर अपना सर्वस्व खो बैठनेपर भी महिलागण उसके पालन करनेमें हिम्मत नहीं हारतीं । मेरा जन्म भी तो उसी कुलमें हुआ है । फिर क्या मै अपने इस तुच्छ और नश्वर जीवनमें उसे कलङ्कित करूंगी ? नही । आहा ! यह पवित्र कुल कितना समर्याद है ! कितनी इनकी धर्मपर श्रद्धा--विश्वास—है ? जो मुझ अबलाका साहस भी आज अलौकिक साहसके रूपमें परिणत हो गया है ।

प्रेमके रत्नाकर ! अच्छा, मेरी प्रार्थना न सुनो । क्योंकि मैं पापिनी हू । मै स्वयं नहीं चाहती कि मेरे द्वारा आपको पापका स्पर्श करना पडे । अच्छा, सुखी रहिए । मै आपके सुखी रहनेकी ईश्वरसे प्रार्थना करूगी और हिन्दू स्त्रीके व्रतका पालन करूगी । हॉ ! एक और प्रार्थना है वह यह कि आप मेरे अपराध क्षमा करना और सदा मु .. ..कहते कहते बेचारी कञ्चनका गला भर आया । वह आगे एक अक्षर भीं मुँहसे न निकाल सकी ।

(७)

भाग्य फूट गया ।

पूनमचन्दने भी अपना विवाह कर लिया । उनकी स्त्रीका नाम तारा है । ताराकी अवस्था अभी कुल आठ वर्षके लगभग है । उसे किसी तरहका ज्ञान नहीं है । वह निरी बालिका है ।

ज्येष्ठका महिना है । गर्मीकी प्रखरतासे पृथ्वी अग्निकी भाति भभक रही है । पशु पक्षियोंकी भी हिम्मत नहीं कि वे अपने आवास स्थानसे बाहिर निकल सकें । इस समय पूनमचन्द जल्दी जल्दी पावोंकीं डग बढाते हुए घरकी ओर बढ़े हुए चले आते हैं । उनकी तबियत गर्मीके आतापसे बिगडी हुई दिखाई पडती है । वे आये और घरमें घुसे कि उन्हें उल्टी और उसीके साथ दस्त होना आरभ होगया । घरके नोकर चाकर दौड धूप करने लगे । वैद्य बुलाये गये । दवा दीगई पर परिणाम कुछ भी नहीं निकला । आखिर उनकी जीवनलीला समाप्त होगई । बेचारी ताराके भाग्यका तारा अस्त होगया । वह जन्मभरके लिए अनाथिनी होगई ।

हाय ! उसके साथ कैसा अनर्थ किया गया ? कैसा राक्षसी कृत्य किया गया ? जिसका उसे यह भयंकर फल भोगना पडा । अभीतक तो वह यह भी न जान पाई थी कि विवाह किसे कहते है ? उसे यह भी नहीं मालूम था कि पूनमचन्द मेरे कौन होते हैं ? पर हा इतना जरूर जानती थी कि वे बूढे है, मेरे घरपर दो चार बार आये है, वहीं जीमें है और वहीं रहे भी है । इस लिए माताके कोई रिश्तेदार होंगे, तभी माताने मुझे इनके साथ भेजदी है । वह कभी कभी तो पूनमचन्दको ऐसे ही सम्बोधनसे पुकार

भी लेती जिससे दूसरोंको यह जान पडता था कि यह पूनमचन्दकी बहन वगैरेहमें किसीकी लडकी होगी। उस वक्त पूनमचन्द उसे शिक्षा देते कि प्रिये! तुम मुझे इस तरह मत पुकारा करो। मैं तो तुम्हारा स्वामी हूं--पति हूं--और तुम मेरी पत्नी--स्त्री--हो। पर बेचारी तारा इस रहस्य को क्या जाने कि पति पत्नी किसे कहते हैं और उनका पारास्परिक क्या सम्बन्ध है?

हाय! भारत! तेरी कैसी दशा विगडी है? संभव नहीं कि ऐसी स्थितिका दूसरे देशोंको भी कभी सामना करना पडा होगा? स्वार्थियोंने तुझे कितने गहरे गढ्ढेमें डाल दिया है वह लिखना अरकठिन है। जो तेरी सन्तान ब्रह्मचारिणी, बलिष्ठ और पूर्ण जितेन्द्रिय हुआ करती थी आज वही व्यभिचारिणी, निर्बल और इन्द्रियोंकी दास होगई है। जो विवाह केवल वर और कन्याके सुखके लिये हुआ करता था आज उसका बिल्कुल उल्टा परिणाम दीख पडता है। जब साठ साठ वर्षके बुढ्ढेके साथ आठ आठ नौ नौ वर्षकी बालिकायें विवाह दी जाती है तब वह कैसे सुखका मूल हो सकता है? अथवा जहां सोलह वर्षकी कन्या और चौवीस वर्षके लडकेका विवाह हुआ करता था वहां वे अब बचपन और अबोध अवस्थाहीमें विवाह दिये जाते हैं। और फिर उनसे अपने वंशकी मर्यादाके सजीवित रखनेकी आशाकी जाती है पर यह संभव नहीं कि उनके द्वारा हमारा देश बलिष्ठ और कर्त्तव्य परायण हो सके? अपक्व अवस्थामें विवाह हुए स्त्री पुरुषोंकी सन्तान बलवान नही होती और न उनके द्वारा कुलपरम्परा ही चल सकती है? न जाने ये कुरीतियां

कब भारतका पिंड छोडेंगीं? कब यहांसे अपना मुँह काला करेंगी ? कब यह पतित भारत पीछा उन्नत होगा ? कब इसकी सन्तानके हृदयमें ज्ञानका प्रकाश फैलेगा ? कब वे अपनी जन्मभूमिके उद्धारका उपाय करेंगे ?

भारतकी सन्तान ! उठो और अपने पवित्र देशका उद्धार करो। देखो तो इन कुरीतियोंने तुम्हारी जन्मभूमिकी कैसी बुरी दशा कर डाली है ? बेचारी तारा इसका उदाहरण है। क्या तुम्हें ऐसे घृणित व्यवहार और निर्दय अत्याचारोंको देखकर भी दया नहीं आती ? तुम्हारा हृदय देशकी दुर्दशासे नहीं पसीजता। यदि सचमुच तुम्हारा हृदय इतना कठोर है—इतना निर्दयी है—तो मैं विश्वास करता हूं कि तुम्हारे समान कृतघ्नी—परोपकारको भूलनेवाला भी कोई नहीं हो सकता है।

ताराके स्वामी पूनमचन्दकी जीवनलीला पूर्ण होगई तब भी वह नहीं जानती कि मुझे किसी आपत्तिका सामाना करना पडा है। मुझपर वज्र आकर गिरा है। घरमें रोना मचा हुआ था पर उसके हृदयमें शोकका नाम निशान नहीं। आखोंमें आंसूकी बूंद नहीं। वह सदाकी भांति अब भी वैसी प्रसन्न है। पाठक ! सच तो है जब वह बेचारी इतनातक नहीं जानती कि विवाह किस चिडियाका नाम है? स्वामी और स्त्रीका क्या धर्म है और उनका क्या सम्बन्ध है ? तब वह क्या समझकर अपने पतिका शोक मनावे ? उसे लोग समझाते हैं कि तू विधवा हो गई है—अब तेरा पति जीवित नहीं है। पर वह जीवित नहीं है इसका यह अर्थ नहीं जानती कि मरा हुआ पीछा आता ही नहीं है। वह इन बातों को क्यों नहीं जानती इसका

यह उत्तर दिया जा सकता है कि अबोध दशाका धर्म अनिवार्य होता है"। तारा अबोध है—बालिका—है। इसीसे वह कुछ नहीं समझती। तारा! तू अभागिनी थी तब ही तो तेरी माताने लोभके वश होकर तुझे कालके हाथ सौंपी—तेरे गलेपर छुरी चलाई। अब तू जन्मपर ऐसी रहकर अपनी माताका—पिशाचिनी माताका—उपकार मानती रहना। पर तारा! तेरा भी एक दोष है—भयंकर अपराध है। वह यह कि तूने नौ महीने अपनी माताके पेटमें रहकर उसे बेहद दुःख दिया था। संभव है उसने तुझे उसीका प्रायश्चित्त दिया हो! उसे तूं भोग। इसमें सन्देह नहीं कि तेरा भाग्य तो अब जीवन भरके लिए फूट गया है।

---

(८)

आत्महत्या।

कञ्चन प्रयत्न करते करते हारगई। पर मोतीलाल किसी तरह सुपथ पर नहीं आया। अन्तमें उसे निराश होजाना पड़ा। मोतीलालने क्यों इतनी निर्दयता धारण की? इसका कारण है। यह हम पहले लिख आये है कि मोतीलालका चाल चलन और स्वभाव अच्छा नहीं था। वह बुरी सङ्गतिमें पड़कर लुच्चे और बदमाशोंके हाथकी कठपुतली होगया था। उसे वे जितना नचाते थे वह उसी तरह नाचता ...। उसे स्वयंकी बुद्धि कुछ नहीं थी। मूर्खोंके साथ खुशामदी ... दाल गल जाना कुछ आश्चर्यकी बात नहीं। ऐसे उदा- ... आज भी बहुत मिल सकते है।

मोतीलालके हृदय पर किसी और भुवनमोहिनीकी प्रतिमा अङ्कित हो रही थी। वह उसे जी जानसे चाहता था। केसरने भी उस पर आपना प्रेमपाश ऐसा फैलाया था कि उसे कहींसे निकलनेको जगह न थी। उसने अपने मधुर मधुर संभाषणसे उसे अपनेपर मुग्ध कर रक्खा था। उसके खञ्जगञ्जन लोचनोंने अपने कटाक्ष बाणोंसे उसके हृदयको बहुत कमजोर कर दिया था। उसकी सुन्दरताकी मन मोहनी छटाओंने उसके मनमें अपना पूर्ण अधिकार कर लिया था। फिर भला क्यों वह कञ्चनकी याद करे? क्यों अपने प्रेमरसको दो भाजनोंमें डालकर अपनेको उसका अपात्र बनावे? उसे दूसरेकी फिकरसे मतलब? इस पर भी केशरने उससे यह कहलवा लिया था—स्वीकार करवा लिया था कि मै कभी अपनी स्त्रीके साथ प्रेमका परिचय न दूगा। मेरी जीवनेश्वरी तुम्ही हो। मैं सब तरह अपनेको तुम्हें सौपता हू। तुम्हें इस जीवनका सर्व अधिकार है। उसने ऐसा क्यों किया? इसके कहनेकी कुछ जरूरत नहीं। कामकी अपार महिमा कौन नहीं जानता। काम बडे बडे विद्वानोंसेभी अधमसे अधम काम करा लेता है तब मोतीलालकी—मूर्ख मोतीलालकी क्या मजाल जो वह उसका अनादर कर सके।

कञ्चनका भाग्य इसी कुलकलकिनी केसरकी कृपासे फूट गया है। वह आज आदर्श दु खिनी होगई है। विना विचारे केवल धनके लोभमें आकर जो अपनी कन्याका विवाह ऐसे मूर्खके साथ कर देते है फिर उसकी जो हालत होती है उसका कञ्चन आदर्श उदाहरण है। यह देख कर भी यदि हमारी जातिकी आखें न खुले तो यही कहना चाहिए कि अभी उसके अध पतनमें बहुत कुछ बाकी है।

कञ्चन कहती है अब मुझसे यह वेदना नहीं सही जाती। मैने जितना कुछ सहा वह केवल एक पापिनी आशाके भरोसे पर। पर अब मुझे स्वप्नमें भी यह आशा नहीं होती कि मुझे कभी प्राणनाथकी सेवाका सौभाग्य मिलेगा? मुझे वे अपनी समझकर अपनावेंगे? फिर इस पापी जीवनको ही रखकर मै क्या करूंगी ? जब मेरा ससारमें कोई अवलम्ब ही नहीं तब मैं किसके लिए इस प्राणभारको उठाकर पृथ्वीको बोझा मारूं? जब मेरा भाग्य सब तरह फूट ही गया है तब मै ही जीकर क्या करूंगी? पापी दैव! तेरे समान संसारमें कोइ निर्दयी नहीं है। तूं अपनी सत्ताके सामने किसीकी नहीं चलने देता। तू जो चाहता है वही कर दिखाता है। तेरे इस निर्दय संकल्प को धिक्कार है। कहते कहते कञ्चनकी आखोंसे आसुओंकी धार वह चली। वह आकाशकी ओर मुहँ उठा कर बोली--परमात्मा! मै विपत्तिकी मारी एक अनाथिनी हूं। संसारमें मेरा कोई नहीं है। मेरा जीवन ही मुझे शूलसा लग रहा है। मुझे जीनेमें सार नहीं दीखता। मैने आजतक जो कठिनसे कठिन दुःख सहा है वह अपनी धर्मरक्षाके लिए। पर अब मै नहीं सहूंगी। मझसे यह जीवनभरका दुःख देखा नहीं जाता। इस लिए मैं अब किसी ओर ही उपायका सहारा लूंगी जिससे सदाके लिए ही दुःखसे छुटकारा पा सकूं। उस उपायके पहले मै आपसे एक प्रार्थना करूंगी। वह यह है कि मै आजतक किसी भी अवस्थामें रही हूं पर तब भी मेरा हृदय पूर्ण रूपसे शुद्ध रहा है। मैने दुःखपर दुःख भोगें हैं, पर आजतक मलीन वासनाको अपने हृदयमें स्थान नहीं दिया है। मै आपसे क्या निवेदन करूं। आप तो सब कुछ जानते है। संभव

है मेरे बाद लोगोंके हृदयमें बुरी कल्पनाका उदय हो । क्योंकि मुझे पुनीत सीता देवीकी जीवनी खूब याद है । वह पवित्र थी—पूज्य थी । पर लोग उसे भी दोषोंसे मुक्त नहीं कर सके । तब मैं किस गिनतीमें हूं । लोग मेरे इस आकस्मिक .... का वास्तविक कारण न समझ कर तरह तरहकी कल्पना करेंगे । तब आप उन्हें निर्मल ज्ञान देना । जिससे वे समझें कि कञ्चन निर्दोष थी—निष्कलङ्क थी । मैंने दु खके परवश हो जिस कामको करना विचारा है—जिसका मै अनुष्ठान करूगी—संभव है वह पापकर्म हो, पर इससे मेरा हृदय दोषी नहीं कहा जा सकेगा । क्योंकि पाप पापमें भी बडा अन्तर है । मेरा यह अनुष्ठान वह पापकर्म नहीं है जो हृदयकी बुरी वासनाके द्वारा होता है । फिर कैसा है ? यह आप जानते हो, मैं क्या कहूं ।

मैं इतने दिनोंतक अबला थी पर अब मै वह कञ्चन नहीं रही । अब मुझमें बल है । मै कठिनसे कठिन और असंभवसे असभव कामको भी अब कर सकती हूं । केवल कर ही नहीं सकती हू, पर करके दिखलाऊंगी । मै अपने..... ... के संकल्पको पूरा करूगी । मुझे इससे उतना दु ख नहीं जान पड़ता जितना कि इस अवस्थाका दु ख मुझपर असह्य भार हो रहा है । जो हो आप मेरी प्रार्थना पर ध्यान देना । अधिक मै कुछ नहीं कहना चाहती ।

वह फिर बोली—प्राणनाथ ! दयासागर ! ! अनाथरक्षक ! ! ! मेरा अपराध—भयकर अपराध—आप क्षमा करना । मैं आपकी थी पर आपने मुझे अपनी न समझी । इसी दु खसे—भयंकर विपत्तिसे—मुझे आपके धर्म विरुद्ध...... ....कहते कहते कञ्चनका गला भर

आया। उसने बडी मुष्किलसे रोते रोते यह कह कर कि इस अभागिनी पर क्ष... ....मा. ... ..क . .....र.......ना.......क्ष....... मा.......कर.......और झटसे कुछ अपने मुहमें डालकर ऊपरसे पानी पी लिया। देखते देखते ही उसके शरीरकी ज्योत्स्ना म्लान हो चली।

---

(८)

भयंकर परिणाम।

पाठक! कञ्चनकी जीवनलीलाके साथ साथ हमारी यह छोटीसी आख्यायिका भी समाप्त होती है, पर एक जरूरी घटनाका उल्लेख करना बाकी रह जाता है। इस लिए इस परिच्छेदमें हम उसीका उल्लेख करते है।

पूनमचन्दको मरे आज आठ वर्षके लग भग बीत चुके है। ताराकी उनके समयमें जो अवस्था थी वह अब नहीं। रही उसने अब बालभाव छोड़कर युवावस्थामें पदार्पण किया है। उसके भावोंमें पहलेसे अब जमीन आशमानका अन्तर है। अब वह पति पत्नीके भावको भी समझने लगी है। कामकी कृपासे अब उसमें अपूर्व श्रीका आविर्भाव दीख पड़ता है। उसके निष्कलंक मुखचन्द्रकी ज्योत्स्नासे उसका हृदय प्रकाशित हो उठा है। वह उसके उजालेमें न जाने किसे ढूंढ रही है। पर उसके मुखकी निराशा और हृदयकी व्यग्रतासे जान पड़ता है कि उसे अपनी प्रिय वस्तुकी प्राप्ति नहीं हुई। उसके सुन्दर लोचन अंगूठीमें जडे हुए हीरेकी तरह दमकने लगे। बेचारा खञ्जनतो उन्हें देख

कर इतना लज्जित हुआ कि उसे शहरका निवास ही परित्याग कर देना पडा। उसकी भ्रुवें इतनी चञ्चल होगई कि क्या मजाल जो विजली भी उन्हें पराजित कर सके? वेचारे वाणकी क्या ताकत जो मनुष्योंके हृदयमें इनके वरावर गहरे घाव कर सके? उसके होठोंकी मधुर हँसी लोगोंके कठोरसे कठोर हृदयमें तीरकी तरह भिदने लगी। उनकी लालिमा प्रात कालीन सूर्यकी लालिमाको दवाने लगी। उसके स्तनोंकी सुन्दरताने सुधापूरित कलशोंकी शोभाको लज्जित कर दी और उसके सुवर्णमय शरीरके मनोहारी लावण्यने सुमेरु शैलकी कान्तिको भुला दी। थोड़ेमें यों कह लीजिए कि अव तारा सव तरह कामके आधीन हो चुकी। कामने उसपर अपनी राज्यसत्ताकी—अपने आधिपत्यकी—मोहर लगा दी।

तारा अव समझने लगी कि मैं वहुत वर्षोंसे अनाथिनी हो चुकी हूं। मुझे मेरी माताने—राक्षसी माताने—इस नरकमें ढकेली है। वह उसे अव जीती जागती पिशाचिनी दीखने लगी। वह कैसी भी है, पर अव हो क्या सकता है। अव तो उसकी आखोंके सामने निराशाका अथाह समुद्र लहरें लेता हुआ दिखाई पडता है। वह कर्त्तव्य विमूढ़ अवश्य है पर तव भी उसके भावोंमें परिवर्तन होगया है। हम उसमें पवित्रता नहीं देखते। उसका हृदय कलंकसे काला जान पड़ता है। उसकी दृष्टिमें अव चञ्चलता है। उसका मन अधीर है। वह उसे अपने कावूमे रखनेको असमर्थ जान पड़ती है। उसका यह सव चरित्र देखकर सभव है पाठक ताराको अपराधिनी कहें, पर इसमें उस वेचारीका दोष क्या? उसका तो विवाह भी उस समय हुआ है जव वह अजान वालिका थी। फिर विवाह भी एक

जहीसके साथ जो अपनी मौतके दिन पूरे कर रहा था। यह दोष यह अपराध उसकी पापिनी माता और निर्दयी—नरपिशाच—पूनमचन्दका है जो दोनोंने अपने अपने स्वार्थके वश होकर उस गरीबिनी असमझ बालिकाके गले पर छुरी फेरी—उसे जीवन भरके लिए—नरककुण्डमें ढकेलदी।

ताराका हृदय अब दिनों दिन बुरी वासनाओंका स्थान बनने लगा। पाठक! आप कुछ भी कहें पर इसमें सन्देह नहीं कि कामसे विजय पाना—उसके विकारोंको नष्ट करना—सर्व साधारणका काम नहीं। जिस कामने चारुदत्त सरीखे कर्मवीरको पाखानेकी हवा खिलाई, रावणके विशाल राज्यको रसातलमें मिलाकर उसे कलंकियोंका शिरोभूषण बनाया, सत्यंधर सरीखे राजतत्ववित् राजाका सर्वनाश कर दिया, ब्रह्माको अपनी ही पुत्रीपर प्रेमासक्त कर उसे अपने देवपनेके उच्चासनसे गिरा दिया, संसार के उपास्य शंकरको आधे स्त्रीरूपमें परिवर्तित कर दिया और चन्द्रको अपने गुरुकी पत्निके प्रेमपाशमें फँसा दिया। वह काम—जगद्विजयी काम—बेचारी ताराके—अबला ताराके—द्वारा जीता जा सके यह नितान्त असंभव।

अँधियारी रात है। शहर भरमें कहीं शब्दका नाम नहीं। चन्द्रमाका अभी उदय नहीं हुआ है। जान पड़ता है कि वह पहलेहीसे तो कलंकी है और आजकी असाधारण कलंकित घटनाको देखकर वह अपनेको क्यों और अधिक कलंकित करे? क्योंकि कलंकियोंकी छायाका छूना भी तो कलंकित करता है। यही समझ कर वह अभीतक उदय पर्वतपर नहीं आया है।

एक वजा। ताराकी नींद टूटी। उसकी आखोंमें पहलेहीसे नींद कहा थी पर कल्पना कर लीजिये कि वह अपनी शय्यापर पड़ी है। इस लिये देखनेवालोंको तो निद्रितही जान पड़ेगी। उसने उठकर अपने कमरेके कवाड खोले और वह धीरे धीरे मकानकी सीढिया तय करती हुई वचिके मजिलमें आ पहुची। वहींपर मोतीलालके सोनेकी जगह थी। उसने दरवाजेके पास खडी होकर मोतीलालको पुकारना चाहा, पर सहसा उसकी हिम्मत न पडी। न जाने क्या सोच समझकर वह पीछी अपने कमरेमें चली गई और शय्यापर आ गिरी। पर अव उसे नींद नहीं आती। वह उधर इधर करवटें वदलने लगी। उसका हृदय वेचेन होगया। वह हिम्मत करके उठती है पर पीछी न जाने क्यों वैठ जाती है। वह कवाड खोलकर कुछ सीढ़िया उतरती है और पीछी लौट आती है। योंही करते करते उसे दो घटे होगये।

अवकी वार वह अपने दिलको मजवूत करके उठी और विना किसी रुकावटके नीचे उतर आई। उसने मोतीलालके कमरेके पास खडी होकर धीरे धीरे कवाड खट खटाये। मोतीलाल भरनींदमें था। पर किसी भयानक स्वप्नके देखनेसे वह हापता हापता उठ वैठा। कवाडकी खटखट आवाज सुनकर उसे कुछ सन्देह हुआ। उसने भीतरहीसे पुकारा—कौन है? तारा धीरेसे वोली कि यह तो मै हू, जरा कवाड खोलो। मोतीलालने ताराका स्वर पहचानकर कवाड खोल दिये। तारा भीतर जाकर वैठ गई और हापते हापते उसने कहा कि मै ऊपर सोती हुई थी। न जाने एका एक क्या धड़ाका हुआ। मुझे डर लगने लगा। इसीसे मै यहा आगई। मोतीलालने

यह कह कर, कि अच्छा अब यहीं सो रहो सवेरे देखा जायगा कि क्या होता था, सोगया। तारा भी वहीं पर लेट गई। पर भयभीत उसका हृदय अभी भी शान्त नहीं हुआ। वह और भी अधिक व्याकुल होगया। तारासे चुप न रहा गया। उसने बातोंका सिल सिला छेड़ ही तो दिया।

वह बोली—मोतीलाल! देखो तो अपना घर थोड़े ही दिनोंमे कैसा सूना सूनासा होगया? जिधर मैं आंख उठाकर देखती हू मुझे तो उधर ही बड़ा डरावना लगता है।

मोतीलाल—भाग्यका ऐसा ही फेर कहना चाहिए।

तारा—यह देखकर बहुत दुःख होता है कि इतने बडे घरमें केवल तुम और मै ही बची हूं। और फिर देखो तो दोनों ही अभागे—दोनों ही दुखी है। कैसी दैवी घटना? हां क्यों मोतीलाल! तुम अब कभी बेचारी बहूकी भी याद करते हो? देखो, न जाने उसे क्या सूझी जो वह आत्महत्या करके मर गई? वह भी हमोरे देखते देखते!

मोतीलाल—उसके भाग्यहीमें ऐसा लिखा था, इसका हम क्या करें?

तारा—मोतीलाल! वह थी बडी सुन्दर। आखिर उससे भी हमारे घरकी बहुत कुछ शोभा थी। देखो सुन्दरता भी क्या चीज है जो तुरत दूसरेके मनको अपनी और झट खींच लेती है? हा मोतीलाल तुमसे मै एक बात पूछती हूं उसे ठीक ठीक बताना? मुझसे वहू अधिक सुन्दरी थी अथवा मै उससे अधिक हूं?

मोतीलाल-मैंने उसे बहुत बार तो देखी नहीं। पर हां कभी कभी अवश्य देखी है। वह तो मुझे लकड़ीकी तरह सूखी सूखी और पीली पीली जान पड़ती थी। मुझे तो उसे देखकर एक तरह अरुचि हो जाती थी। मैं कह सकता हूं कि उसमें और तुममें जमीन आसमानकासा अन्तर है।

तारा—मोतीलाल! क्या तुम मुझे उससे अधिक सुन्दरी समझते हो? अच्छा तब तो मैं तुम्हारी दृष्टिमें बहुत खूबसूरत हूं। मोतीलाल! सौन्दर्य भी कैसा प्यारा होता है? वह भी फिर स्त्रीका? तुम सच तो कहो कि तुमने भी कभी सौन्दर्यपर प्रेम किया है। मोतीलाल! तुमपर मेरा बड़ा प्रेम है। हा ठीक भी तो है, मेरे देखनेको तुम्हारे सिवा और हैही कौन? तुम्हीं मेरी आंखके तारे हो। फिर तुमपर ही प्रेम न होगा तो किसपर होगा? पर मोतीलाल! यह जानकर हृदयपर वज्रका पहाड़ गिर पडता है कि मैंतो दुःखी हूं सो हूंही पर साथ ही तुम्हें भी दुःखके अपारसमुद्रमें डूबा हुआ देखती हूं। क्यों मोतीलाल! क्या तुम कोई उपाय नहीं करते जिससे मैं तुम्हें सुखी देख सकूं?

मोतीलाल—तुम क्यों इतनी चिन्ता करके दुखी होती हो? देखा जायगा।

तारा—हां मोतीलाल! सुनो तो तुम अपना विवाह क्यों नहीं कर लेते?

मोतीलाल—एक विवाह ही बड़ी कठिनतासे हुआ था. अब न जाने कितनी तकलीफ उठानी पड़ेगी?

तारा—क्यों? तकलीफ कैसी?

मोतीलाल—मुझे तो कुछ मालूम नहीं पर पिताजी कभी कभी कहा करते थे कि मोतीलालके विवाहमें वड़ी दिक्कतें उठानी पड़ी थी।

तारा—अच्छा जाने दो। तुम्हें विवाह करके ही क्या करना है? जवतक कि..............हां मोतीलाल! यह तो कहो कि प्रेम करना कैसा है? और तुम उसे कैसा समझते हो?

तारा-निर्लज्ज तारा-मोतीलालको वातोंमें लगाकर धीरे धीरे उसके पलंगपर जा वैठी। मानो घीके पास अग्नि आ विराजी। नीति कारने वहुत ठीक कहा है—

अङ्गारसदृशी नारी नवनीतसमा नराः।
तत्तत्सान्निध्यमात्रेण द्रवेत्पुसा हि मानसम्॥

आगे क्या हुआ? यह लिखनेको हम लाचार है।

उपसंहार।

तारा वहुत दिनोंतक आनन्द मनाती रही। पर पापका—महापापका-फल भयंकर होता है। उसे अपने पाप छिपानेके लिए एक अनर्थ और करना पडा। वह क्या? भ्रूणहत्या—वालहत्या। जव वह इस पाप कलङ्कसे वचनेके लिए वच्चेको—अपने जिगरको—कुएमें डालने गई तव पांवके फिसल जानेसे उसके साथ साथ आप भी डूव मरी। अभागे भारत! तेरी छातीपर तो ऐसे महापातक दिन-रात हजारो ही होते है। इसीसे तेरा अधःपतन हुआ है—तेरा सर्व-नाश हुआ है।

एकता ।

यह बात किसीसे छिपी हुई नहीं है कि ऐहिक और पारलौकिक उन्नतिका बीज एकता है। यदि हम संसारकी प्रत्येक वस्तु पर ध्यान देंगे तो हम जान सकेंगे कि वे सब एकतासे खाली नहीं है। देखिये, वर्णमालाके अक्षरोंकी एकतासे शब्द पद वाक्यादि बनते है। वाक्योंके द्वारा हम अपने इष्ट अभिप्रायोंको कहकर तथा लिखकर प्रगट कर सकते है। जैन वाङ्मय, जिससे हमारा आत्म-कल्याण होता है, एक मात्र वर्णमालाके अक्षरोंकी एकताका प्रभाव है। मंत्र तत्रका अचिन्त्य प्रभाव भी एकताके विद्युत् चमत्कार-से खाली नहीं है। वस्त्र, जिसके द्वारा हम अपने शरीरकी रक्षा करते है वह भी सूतके डोरोंकी एकताका आविष्कार है। बीमारियोंको निर्मूल करनेवाली औषधिया भी एकताके मंत्रसे पवित्रित है। जिन घरोंमें हम रहते है वे भी ईंट मिट्टी पत्थर आदिकी एकतासे बने है। सूतके धागोंकी एकतासे बने हुए रस्सों द्वारा मदोन्मत्त हाथी बांधे जाते है—इत्यादि। जिधर देखिए उधर ही आपको सारा संसार एकता मय दीख पडेगा। फिर क्यों न हम भी इस महाशक्तिके प्राप्त करनेका प्रयत्न करें? क्यों न इसे अपनी जाति भरमें फैला दें? यह तो हुई एकताकी महिमा।

अब अनेकताके महत्त्वको सुनिये—जहा इसका पदार्पण होता है वहीं सब उन्नतिका अन्त हो जाता है। सब सामाजिक और धार्मिक काम नष्ट हो जाते है। परस्परमें कषायोंकी अग्नि धधक उठती है। हृदय द्वेष और ईर्षाका स्थान बन जाता है। भाईको भाई घृणा दृष्टिसे देखने

लगता है। जिस घरानेमें, जिस वंशमें, जिस जातिमें, जिस देशमें और जिस राष्ट्रमें अनेकता विस्तार हो रहा है, समझलो कि उसका भविष्य अच्छा नहीं है। सामाजिक शक्तिको निर्मूल करनेवाली एक मात्र फूट है। जैनजाति अनेकताके ही कारण रसातलमें पैठती जा रही है। आज यूरोपियन, पारसी, आर्यसमाजी आदि सभी एकताके प्रभावसे दिनोंदिन उन्नतिके शिखरपर आरूढ़ हो रहे है। पर खेद है कि जैन समाजने अभीतक अपनेको एकताके सूत्रमें गुम्फित नहीं किया। न मालूम कब वह शुभ दिन आवेगा जब सब जैनी एक चित्त होकर धार्मिक, लौकिक और पारमार्थिक उन्नति करनेमें संलग्न होंगे। दिगम्बर जैनियोंमें खण्डेलवाल जातिकी संख्या सबसे अधिक है। पर अविद्या और अनेकताकी मात्रा भी सबसे अधिक इसी जातिमें पाई जाती है। लश्कर, जयपुर, अजमेर, इंदौर भरतपुर, कुचामन इत्यादि नगरोंमें, जहा इस जातिकी बहुत संख्या है वहां विकराल फूट पड रही है। जातिमें तड़े पड़ गई हैं। एक तडवाले दूसरी तडवालोंको शत्रुभावसे देखते है और उनकी मानहानि करनेमें बिलकुल नहीं सकुचाते है। जिस खण्डेलवाल जातिमे प्राचीन समयमें पचो द्वारा जातीय झगड़े मिटाये जाते थे, आज वही जाति अपना निबटेरा करानेको दूसरेके द्वार द्वार ठोकरें खाती फिरती है। पहले जिसकी शक्ति इतनी बड़ी चढ़ी थी कि यदि जातिमें कोई कुलाङ्गार व्यभिचारी होता तो जातिसे उसका बहिष्कार किया जाता था तथा और भी अन्याय प्रवृत्तिका उचित दण्ड देकर धार्मिक मर्यादा बनाई रक्खी जाती थी, पर आज वे सब बातें लोप होगई। पचोंमें प्रपंच फैल गया। लौकिक लज्जा जाती रही। जो

धर्म विरुद्ध कार्य, धर्म-धुरंधर बंधुओं और विद्वानों द्वारा जातिसे बंद-किये गये थे वे ही आज निरर्गलतासे जारी होगये। जैनी दयाधर्मी कहलाते हैं, परन्तु अपने भाइयोंसे वे महानिर्दयताका वर्ताव करनेमें सदा कटिबद्ध रहते हैं। इसीसे कहना पड़ता है कि न मालूम इस जातिका क्या होनहार है? एक समय यह जाति शान्ति और एकताकी आदर्श जाति समझी जाती थी, पर आज वह सब स्वप्न-कीसी लीला जान पड़ती है। उसमें अनेकता और अशांतिका पारावार नहीं रहा। जहां देखो वहां जातिके भाई आपसमें सुलह करना महापातक समझने लगे। उनका क्रोध आंखोंमें उबल उठने लगा। उन्हें अपने ही सधर्मियोंसे बदला लेनेके लिये अदालतोंमें पहुंचना पड़ा। वहां पहुंचते ही उनकी आंखोंपर पट्टी बंध गई। मुकद्दमें चलने लगे। अंधाधुंध द्रव्य खर्च होने लगा। जगतमें अपयशका डंका बज गया। इस प्रकार धर्म, धन, मान, यश, सबको वे जलांजुली दे बैठे। पाठकगण! खण्डेलवाल जातिके लिये यह कितनी लज्जाकी बात है? इससे अधिक और क्या हमारी अधोगति हो सकती है?

इस सर्वंकपा जातीय फूटने-घेरलू झगड़ोंने-उन्नतिके मार्गमें कांटे बोदिये हैं। अन्य जातियोंमें जातीय भाइयोंका पारस्परिक प्रेमभाव देखकर हृदयमें जितना ही सन्तोष होता है उससे भी कहीं अधिक दुःख अपनी जातिकी दुर्दशाके देखनेसे होता है। आश्चर्य इस बातका है कि जीवमात्रसे प्रेम करना जिसका प्रधान कर्त्तव्य था उसीका उससे तिरोभाव होगया। यहांतक कि कुटुम्बीय कलहके कारण वंशके वंश नष्ट होगये। भाई भाईमें, पति स्त्रीमें, पिता पुत्रमें, बहिन भाईमें

दुश्मनी होगई । फूटने समूह शक्तिके सर्वस्वको अपहरण कर लिया । सहनशीलताका सर्व नाश होगया । मानकपायके वश हो प्रत्येक अपनेको अहमिन्द्र समझने लगा । परस्पर सहायताकी आशापर पानी फिर गया । इसी प्रकार इस जातिसे उपगूहन और स्थितिकरण अंग भी विदा होगये । अर्थात् साधर्मियोंके दोषोंको ढांकना और उन्हें धर्मसे डिगते देखकर धर्मके सन्मुख करना इन धर्मवृद्धिके दोनों कारणोंका अभाव होगया ।

इग्लैंड, जर्मनी, जापान आदि देशोंमें जो आश्चर्यकारी उन्नति हो रही है उसका कारण एकता है । सहस्रों क्वापरेटिव सोसाइटी, कंपनिया, मिलें, जिनसे लौकिक उन्नति होती है और लाखों मनुष्योंका निर्वाह होता है, एकताकी शक्तिसे चलते है । सब जानते है कि विलायतवाले अपने कला कौशल और पुरुपार्थके बलसे संसारका धन अपने देशकी ओर ले जा रहे है और उसे चकित कर रहे है तो भी हम मोह निद्रासे जागृत नहीं होते । दैवने हमारे पाव पकड़ रक्खे हैं । खण्डेलवाल जातिमें धनकी कमी नहीं है, तो भी कोई कंपनी, मिल, बैंक आदि इस जातिके धनवानोंने स्थापित की हो यह देखनेमें नहीं आता । इसीसे दिनोंदिन यह जाति दरिद्रताके ग्रहसे ग्रसित होती जा रही है । पुरानी शास्त्र विरुद्ध रूढ़ियोंके घुनसे हम घुने जा रहे है । यदि कोई सुधार करना चाहता है तो रूढ़िके गुलाम उसका कठ पकड़ लेते हैं और बुरी तरह सामना करने लगते है। जैसा कि पाठक, "बडनगरमें विद्याशत्रुओं-की धींगाधींगी" से मालूम कर चुके है । उद्योग प्रधान कार्यालय खोलनेका साहस नहीं होता । इसका कारण अविद्या और अविश्वास

है। इस जातिके धनाढ्योंके हृदयमें करुणादेवीका वास विल्कुल नहीं है। तभी तो वे जातिके अनाथोंकी रक्षा नहीं करते, उन्हें शिक्षा प्राप्तिके सुगम मार्गमें नहीं लगाते और न इस बातकी परवा करते कि अपनी जातिमें विना उद्योगके दु:खसे निर्वाह करने वाले जैनी भाई कितने हैं? यदि वड़े वडे कारखाने खोले जावें और गरीव जाति-भाई उनमें कामपर लगाये जावें तो उनका निर्वाह और जातिकी दरिद्रता नष्ट होने लगे। पर उनमें प्रेमके—जातीय प्रेमके—विना इतनी करुणा कैसे हो सकती है?

एक समय पांचों इन्द्रियोंमें झगडा खड़ा होगया। प्रत्येक इन्द्री अपनी अपनी प्रधानताका कीर्त्तन करने लगीं कि मेरे न होनेसे शरीरका कोई भी काम नहीं चल सकता। इसी कलहके कारण एक दिन स्पर्शन इन्द्रियने स्पर्श करना, जीभने स्वाद लेना, नाकने गंध लेना, आखने देखना और कानने सुनना छोड़ दिया। परिणाम यह हुआ कि निष्क्रिय रहनेसे वे सब शिथिल पड़ गईं। तब उन्हें मालूम होगया कि जबतक हम विना विरोधके एकतासे आपना कार्य करतीं रहीं तबतक हृष्ट पुष्ट और कार्यतत्पर बनी रहीं। पर जब हममें विरोध फैल गया तब एक ही साथ हम सब निबल होगईं। ठीक यही दशा खण्डेलवाल जातिकी हो रही है। जबतक उसमें फूट रहेगी तबनक वह किसी प्रकारकी उन्नति नहीं कर सकती।

आपको गंजीफा अर्थात् तास खेलनेका प्रसंग अवश्य मिला होगा। कहिये, आपने इस खेलसे किस प्रकारकी शिक्षा ग्रहण की? इन पत्तोंके खेलमें भी एक अद्भुत शिक्षा दी

गई है। उसपर ध्यान दीजिये। आप जानते है कि गुलामको रानी जीत लेती है, रानीको बादशाह जीत लेता है और बादशाहको इक्का जीत लेता है। पर इक्काको कोई नहीं जीत सकता। राजा भी उसके साम्हने हार मानता है। यह इक्का कोई अन्य वस्तु नहीं है। किन्तु एकताको ही इक्का कहते हैं। इस लिये जहां एकता है वहीं जीत होती है।

यदि आप अपनी जातिकी उन्नति करना चाहें तो मेलसे काम करना सीखिए, साधर्मियोंसे वात्सल्य धारण कीजिए और एकताके प्रबल किले द्वारा अपनी जातिको सुरक्षित बनाइये। फूटने हमारा सर्व नाश कर डाला है। इस लिए अब हमें उसका साथ छोड़ देना जरूरी है। और तब ही हम अपनी उन्नति कर सकेंगे। परमात्मा करे वह दिन हमें शीघ्र प्राप्त हो जब हम भाईसे भाई गलेसे लगें और मिलकर जातिकी अवनतिको उन्नतिमें परिणत करदें।

प्रार्थी—बुद्धमल पाटनी, इंदौर।

बारह भावना।

अनित्यभावना।

देह गेह सजनेमें लगे क्या हो, गिरिधर देह गेह जोवन अनित्य सब मानिये, पीपलके पान सम कुंजरके कान सम बादलकी छांह सम इन्हें चल जानिये। बिजलीकी चमकसी पानीके बुदबुदसी इन्द्रके धनुपसी ये सम्पत्ति प्रमानिये, दया दान धर्ममें लगाके इसे भली भांति ठानिये परोपकार सुख मन आनिये। *

* बाबा भागीरथजीके द्वारा प्राप्त।

अशरणभावना।

राजा महाराजा चक्रवर्ती सेठ साहूकार सुर नर किन्नर सकल गिन जाईये, कोई भी समर्थ नहीं किसीको बचानेको आसरा इन्हींसे फिर किस तरह पाइये। तरण एक गुरुके चरण सोहें, उनकी शरण गह ज्ञान मन लाइये, गाइये गुणानुवाद गिरिधर ईश्वरके भयको नसाइये औ आनंद मनाइये।

संसारभावना।

नाना जीव बार बार जनम जनम मरें नये नये धरें देह जाचकर लीजिए, जग है असार यहा कोई वस्तु सार नहीं दुखभरी गतिया है चारों देख लीजिए। गिरिधर चित्तमें न दोष कहीं घुस बैठे इससे सदा ही सावधान रह लीजिए, सबकी भलाईकर रखिये चरित्र शुद्ध पीजिए सुज्ञानामृत आत्मध्यान कीजिए।

एकत्वभावना

आये है अकेले और जायगे अकेले सब भोगेंगे अकेले दुख सुख भी अकेले ही, माता पिता भाई बन्धु सुत दारा परिवार किसीका न कोई साथी सब है अकेले ही, गिरिधर छोड़कर दुविधा न सोचकर तत्त्व छान बैठके एकान्तमें अकेले ही, कल्पना है नाम रूप झूठे राव रक भूप अद्वितीय चिदानन्द तुम हो अकेले ही।

अन्यत्त्वभावना।

घर बार धन धान्य दौलत खजाने माल भूषण वसन बडे बड़े ठाठ न्यारे है, न्यारे न्यारे अवयव शिर, धड, पाव न्यारे जीभ,

त्वचा, आख, नाक, कान आदि न्यारे हैं। मन न्यारा चित्त न्यारा चित्तके विकार न्यारे न्यारा है अलङ्कार सकल कर्म न्यारे हैं, गिरिधर शुद्ध बुद्ध तू तो एक चेतन है जगमें है और जो जो तोसे सारे न्यारे है।

अशुचिभावना।

गिरिधर मलमल साबू खूब न्हाये धोये कीमती लगाये तेल बार बार बालमें, केवड़ा गुलाब बेला मोतियाके सूंत्रे इत्र खाये खूब माल ताल पड़े खोटी चालमें। पहने वसन नीके निरख निरख काच गर्व कर देहका न सोचा किसी कालमें, देह अपवित्र महा हाड़ मांस रक्त भरा थैला मलमूत्रका बंधा है नसजालमें।

आस्रवभावना।

मोहकी प्रबलतासे कषायोंकी तीव्रतासे विषयोंमें प्राणीमात्र देखो फंस जाते हैं, यहा फसे वहा फंसे यहा पिटे वहां कुटे इसे मारा उसे ठोका पाप यों कमाते है। पड़ते परन्तु जैसे जैसे है कषायमन्द वैसे वैसे उत्तम प्रकृति रच पाते है, गिरिधर बुरे भले मन वच काय-योग जैसे रहें सदा वैसे कर्म बन आते हैं।

संवरभावना।

तोड़ डाल भ्रमजाल मोहसे विरत हो जा कर न प्रमाद कभी छोड़दे कषाय तु, दूर हो विचार बात करनेसे विषयोंकी माथे पड़ी सारी सह मत उकताय तू। मन रोक वाणी रोक रोक सब इंद्रियोंको गिरिधर सत्य मान कर ये उपाय तू, बधेंगे न कर्म नये निरेपक्ष होके सदा कर्त्तव्य पालनकर खूब ज्यों सुहाय तू।

निर्जराभावना ।

" इससे न बात करो इसे यहा न आनेदो इसको सतावो मारो क्योंकि दोषवान है, कपटी कलंकी कूर पापी अपराधी नीच कामी क्रोधी लोभी चोर कुकर्मोंकी खान है।" रखके विचार ऐसे लोग जो सतावें तो भी सहले विपत्तियोंको माने ऋणदान है, गिरिधर धर्म पाले किसीसे न बांधे वैर तपसे नसावे कर्म वही ज्ञानवान है ।

लोकभावना ।

बाकी कर कोन्हियोंको जरा पाव दूरे रख आदमीको खडाकर गिरिधर ध्यान धर, चतुर्दश राजू लोक ऐसा ही है नराकार उसमें भरे हैं द्रव्य छहों सभी स्थानपर। एकेंद्रिय द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय त्यों पचेन्द्रिय सन्यसंज्ञी पर्याप्तापर्याप्त कर, भरे ही पडे है जीव पर सब चेतन है स्वानुभव करें त्यों त्यों पावे मोक्षधाम वर ।

बोधिदुर्लभभावना ।

एक एक श्वासमें अठारे अठारे बार मर मर धरें देह जग जीव जानलो. बड़ी ही कठिनतासे निकले निगोदसे तो अगणित बार भमे भव भव मानलो। दुर्लभ मनुष्य भव सर्वोत्तम कुल धर्म पाये हो गिरधर तो सत्य तत्त्व छानलो, होकर प्रमाद वश कालक्षेप करो मत सबकी भलाई करो निजको पिछानलो ।

धर्मभावना ।

बाहरी दिखावटोंको रहने न देता कहीं सारे दोष दूर कर सुख उपजाता है, काम क्रोध लोभ मोह राग द्वेष माया मिथ्या तृष्णा मद मान मल सबको नसाता है। तन मन वाणीको बनाता है

विशुद्ध और पतित न होने देता ज्ञान प्रकटाता है, गिरिधर धर्म प्रेम एक सत्य जगवीच परमात्म तत्त्वमें जो सहज मिलाता है ।

गिरधर शर्म्मा झालरापाटन ।

संतानशिक्षा ।

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः ।

" सन्तान उत्पन्न करके उसके शरीरकी रक्षा करना, उसे पुष्ट करना और उसके पालन पोषणके लिए धन इकट्ठा करना ही सन्तानके प्रति माता पिताका कर्त्तव्य नहीं है । किन्तु जो जीवनकी अपेक्षा बहुत मूल्यवान है और जिससे मानव जीवन सार्थक होता है उस अमूल्य ज्ञान और धर्मोपदेशसे अपनी सन्तानको भूषित करना माता पिताका प्रधान कर्त्तव्य है । "

सन्तानके प्रति माताका कर्त्तव्य दो प्रकार है । प्रथम--सन्तानपालन अर्थात् सन्तानकी शारीरिक उन्नति और द्वितीय--संतानशिक्षा और चरित्रगठन । सन्तान पालनके सम्बन्धमें इस समय न लिखकर फिर कभी लिखेंगे । आज केवल सन्तानशिक्षा और चरित्रगठनके सम्बन्धमें कुछ लिखते है ।

गृह ही मनुष्यका प्रथम और प्रधान विद्यालय है । माता उसकी मुख्य अध्यापिका है । इसी विद्यालयमें मानव हृदयमें सर्व प्रकारके गुण और दोषका बीज अङ्कुरित होता है । किसी एक विद्वानने निश्चय किया है कि सन्तान, डेढ़ वर्षसे ढाई वर्षके बीचमें संसारके पदार्थगत और अपने तथा परके मानसीक प्रकृतिगत ज्ञानका

जितना ज्ञान प्राप्त करती है, उतना ज्ञान जीवनके अवशिष्ट भागमें वह कभी नहीं कर सकती।

किसी एक अंग्रेजी पुस्तकमें लिखा है कि किसी स्त्रीने अपनी सन्तानको चार वर्षकी अवस्थामें किसी धर्मगुरूके पास लेजाकर उससे अपनी इच्छा प्रगटकी कि महाराज! कबसे मैं अपने बच्चेको पढ़ाना आरम्भ करूं? उसके उत्तरमें धर्मगुरूने कहा कि सन्तानकी अवस्था चार वर्षकी हो चुकी और तबतक उसे शिक्षा देना आरंभ नहीं किया तब कहना चाहिये कि उसके जीवनके अति मूल्यवान चार वर्ष तुमने व्यर्थ ही नष्ट कर दिये। इसके लिये तुम्हें पश्चात्ताप करना चाहिए। बालक जब अपनी माताकी ओर देखकर हँसने लगता है तब उसी हँसीके साथ साथ बालकको शिक्षा देना माताका कर्त्तव्य है। कारण तबहीसे शिक्षाका समय उपस्थित होता है।

शिक्षाप्रणाली दो प्रकारकी है। एक दृष्टान्त द्वारा और दूसरी उपदेश द्वारा। इन दोनोंमें पहली प्रणाली अधिक कार्यकारी और जीवनपर असर डालनेवाली है। इस दृष्टान्तप्रणालीसे माताके द्वारा नाना तरहकी शिक्षा प्राप्त होती है। क्योंकि दूसरोंका अनुकरण करना बालकोंका स्वाभाविक कर्त्तव्य होता है। बालकगण परिवारके बीचमें जो कुछ देखते हैं, फिर वे उसीके करनेकी चेष्टा करते है और जो कुछ सुनते है वे उसे बोलना चाहते हैं। बालकोंका मन हरिततृणकी तरह अत्यन्त कोमल होता है। सुतरा तृणको जिस भाति नवाना चाहो वह नवाया जा सकता है। वही हालत बालकोंके मनकी है। उसे जिस तरह शिक्षित किया जाय वह उसी तरह हो सकता है। उसमें एक और विशेषता है। वह यह कि उस समयकी शिक्षाका असर

उनके जीवनपर्यन्त वना रहता है। उसका फिर परिवर्तन नहीं होता।

बालक परिवारके माता, पिता, भाई, बहन आदि कुटुम्बियोंमें यद्यपि प्रत्येकका अनुकरण करता है, परन्तु उन सबमें माता ही प्रधान है। माताके साथ किसीकी तुलना नहीं की जा सकती। किसी विद्वानने इस विषयमें अपना अभिप्राय लिखा है कि "बालकका चरित्रगठन और भावी उन्नतिका होना एक मात्र माताके गुण और दोषके ऊपर निर्भर है। इस विषयमें पिताकी अपेक्षा माता-की ही प्रधानता स्वीकार करनी पड़ती है। उसने और भी लिखा है कि यूरोपमें यह पद्धति है कि किसी कारखानेका मालिक जब अपने कारखानेमें किसी बालक अथवा बालिकाको किसी कामपर नियुक्त करना चाहता है तब वह उनकी माताका चरित्र अच्छा जान लेनेपर उन्हें निःसन्देह अपने यहां रख लेता है।

पृथिवीके जितने बड़े बड़े महात्माओंके जीवन चरित्र पढ़े है, जो अपनी असाधारण योग्यताके द्वारा संसारमें प्रसिद्ध हो गये है, उनमें अधिक महात्माओंने यह बात मुक्तकण्ठसे स्वीकार की है कि हमारी विद्या और बुद्धिकी जितनी कुछ उन्नति हुई है उसका मूल कारण हमारी माता है।"

"महावीर नेपोलियन बोनापार्ट सदा यह कहा करता था कि सन्तान-का भावी सुख दुःख अथवा उसकी उन्नति अवनति यह सब माताके उपर ही निर्भर समझना चाहिए। माताकी दी हुई शिक्षा ही हमारे ज्ञान और उन्नातिकी प्रधान कारण है।"

इनके सिवा और एक एजनीतिज्ञ अमेरिकाके विद्वानने लिखा है कि "बालकपनमें मेरी माता हाथ पकड़कर बैठ जाती और

कहती कि " तुम्हारा पिता (ईश्वर) मोक्षमें है " यदि बालकपनकी ये बातें मुझे याद न रहती तो सचमुच मैं नास्तिक हो जाता। संसारमें ऐसे उदाहरणकी कमी नहीं है। हम अपने जीवनमें माताकी दी हुई शिक्षाका जो कुछ फल भोग रहे है, उससे लाभ उठा रहे हैं, उसके द्वारा ही माताके गुण दोष हमारे जीवनमें किस तरह अनायास अथवा दृढ़तासे कार्य करते है यह हम जल्दी समझ सकते हैं।

उपदेशकी अपेक्षा माता पिताका व्यवहार बालकके चरित्र-गठनमें अधिक काम करता है। ऐसा देखा जाता है कि उपदेश और हो और कार्य और ही हो तब भी बालकगण उप-देशका छोड़कर कार्यका ही अनुसरण और अनुकरण करते है।

सन्तानकी शिक्षा और उसके चरित्रगठनके सम्बन्धमें माताके गुरुत्वकी और हमारी वर्तमान अशिक्षितावस्थाकी मीमांसा करने पर सन्तानके उन्नतिकी आशासे निराश होना पड़ता है। हमारे देशमें सच्ची माता नहीं यह सामान्य लज्जा और दुःखका विषय नहीं है। जिसके ऊपर सन्तानकी शारीरिकि, मानसीक और नैतिक उन्नति निर्भर है उसे किस तरहकी गुणवती और विदुषी होनी चाहिए यह शब्दों द्वारा समझाना कठिन है।

(१) बालकगण उपदेशकी अपेक्षा कार्यका ही अधिकतर अनु-सरण करते है। इस लिए सन्तानके सामने किसी तरहका बुराकार्य नहीं करना चाहिए और न कभी बुरे वचन बोलना चाहिए। तुम्हारे खोटे व्यवहार करनेसे, दूसरेके प्रति अन्याय करनेसे अथवा किसीको ठगनेसे बालकके सुकोमल हृदयमें उसी तरहका चित्र अङ्कित होजा-

ता है। फिर उसे हजारों उपदेश दीजिए पर वह दोष कभी नहीं दूर होनेका। बहुतसे ऐसे मनुष्य हैं जो बालकको अबोध समझ कर उसके सन्मुख खोटा व्यवहार करते लज्जित नहीं होते। विचार करनेसे जान पड़ेगा कि यह केवल उनकी मूर्खता है। क्योंकि बालकके स्वच्छ-निर्मल-हृदयदर्पणमें माताका प्रत्येक कार्य प्रतिबिम्बित होता रहता है।

(२) बालकोंकी हर एक तरहकी बातें पूछनेमें स्वाभाविक उत्कण्ठा होती है। इस लिए बालक यदि कुछ देखकर अथवा सुनकर उस विषयमें पूछताछ करे तो माताको उचित है कि वह उसके प्रश्नोंका ठीक ठीक उत्तर दे। ऐसा न करे कि उत्तरकी जगह उल्टा उसपर विरक्त अथवा क्रोधित हो। क्योंकि उसके पूछे हुए प्रश्नपर विरक्तता प्रकाश करनेसे अथवा किसी तरहका उत्तर न देनेसे उसकी प्रश्न करनेकी इच्छा धीरे धीरे कम हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षाकी धार फिर बिलकुल ही बंद हो जाती है। इस लिए बालकगण जिस समय जो बात पूछे उन्हें उस समय वह बात समझानेके लिए कभी आनाकानी नहीं करनी चाहिए।

(३) बालकको पढने लिखनेके लिए अधिक धमकाना, मारना अथवा उसे पांचवर्षसे पहले पढनेके लिए विद्यालय, पाठशाला आदिमें भेजना अनुचित है। इस अवस्थामें तो माताको चाहिए कि वह अपनी सन्तानको मौखिक शिक्षा दिया करे। इंग्लेण्ड आदि सभ्य देशोंकी भांति बालकोंका विद्यालयोंमें रहना और उन्हें शिक्षित करनेके लिए वहा भेजना यद्यपि उचित है पर हमारे देशमें जबतक वैसे विद्यालय अथवा वैसी पढ़ानेवाली स्त्रिया नहीं है तबतक बालकोंके लिए घर ही

उत्तम शिक्षाका स्थान है। पाठशालाकी बुरी शिक्षाप्रणाली और कठोर शासन प्रणाली लिखने पढनेमें बालकोंको इतना उदासीन बना देती है कि फिर जीवनपर्यन्त वह भाव हृदयमें खूब ठस जाता है और इससे वे लिखने पढनेका सुख अनुभव करनेमें असमर्थ हो जाते हैं। विशेष करके माता शिक्षाप्रद छोटी छोटी कथाओंके द्वारा यदि बालकको शिक्षा दिया करे तो वे इतनी हृदयग्राही और कार्यकारि होती है कि हजारों बार पढानेसे भी उतने फलके लाभकी सभावना नहीं होती।

(४) एकसे अधिक सन्तान हो तो भी माताको उन सबपर समान प्रेम और उनके सुधारके लिए समान प्रयत्न करना चाहिये। जब अपनी सन्तानपर माताका प्रेम कम ज्यादा होता है तब उनके हृदयमें प्रतिहिंसा, द्वेष और पक्षपातका आविर्भाव होता है। भाई बहनके बीचमें पारस्परिक प्रेम नष्ट हो जाता है। सन्तान सुन्दर हो चाहे कुरूप हो, मूर्ख हो चाहे बुद्धिमान हो, उन सबका समान भावसे प्रतिपालन करना चाहिए। ऐसा करनेसे भाई बहनमें प्रेमका अभाव नहीं होता है। होना तो ऐसा चाहिए, पर आज कल माताका प्रेम पुत्रीकी अपेक्षा पुत्रपर अधिक देखा जाता है। माताके लिए ऐसे भिन्न भावका होना अत्यन्त निन्दित है और यह भाव पुत्र और पुत्री इन दोनोंके लिए भी अहितका कारण है।

(५) जब बालक रोने लगता है और सोता नहीं है तब उसे भूत, पिशाच, वा सिंह, रींछ आदिका भय दिखाया जाता है पर बालकके लिए इससे बढकर कोई कुप्रथा अनिष्टकारी नहीं है।

इससे बालकपनमें ही मन अत्यन्त संकुचित भयवान और निरुद्यमी हो जाता है। फिर मनोवृत्तियोंमें स्फूर्ति और विकाश नहीं हो सकता। अन्धकार युक्त स्थानमें जानेसे अथवा किसी भयानक शब्दके सुननेसे फिर उनका हृदय कम्पित होने लगता है। विचार करनेसे स्पष्ट जान सकोगे कि ऐसी ऐसी दुष्प्रथा ही हमारे देशकी सन्तानके निर्बल होनेकी प्रधान कारण हैं। रोते हुए बालकको सहसा ऐसा डर दिखानेसे उसे उसवक्त जैसा कष्ट—दुःख—होता है यह बतलाना बहुत कठिन है। यद्यपि उस समय बालक डरसे रोना अवश्य बंद कर देता है पर उसके वेगको सहसा रोकनेमें उसे असमर्थ होजानेसे फिर उसका हृदय फटने लगता है। वह उस समय आंखे मीचकर अथवा माताके आंचलसे अपना मुँह छिपाकर उसी मूर्ख माताकी गोदमें छिपनेकी चेष्टा करता है। इस तरहके भयसे ही अधिकांश बालकोंको अच्छी नींद नहीं आती और फिर इसीसे वे उस कच्ची नीदमें स्वप्न देखकर रो उठते हैं।

(६) बालकको शान्त करनेके लिए बहुतसी उनकी माताएं उन्हें झूठा विश्वास करा देती हैं। चुप रह! तुझे मिठाई दूंगी, खिलौना दूंगी, आकाशसे चांद लादूंगी। इस तरहकी अनेक सच्ची झूठी बातोंसे उसे वे शान्त करनेकी चेष्टा करती है। माता झूठ नहीं बोलती है, उसमें बहुत शक्ति है, वह इच्छा करते ही चन्द्र, सूर्य, आकाश, पाताल आदि सभी कुछ ला सकती है। पहले पहल बालकके सरल हृदयमें इस तरहका विश्वास दृढ़ हो जाता है। बाद दो चार दिनतक इसी तरह उसे धोखा देनेसे वह फिर माताके कहनेपर विश्वास नहीं करता है। स्वयं भी झूट बोलने, दूसरोंको ठगने और

निराश करनेकी शिक्षा ग्रहण करता है। और जब वह बालकोंके साथ खेलनेके लिए जाता है तब उसे देखोगे तो जान पड़ेगा कि वह अपनी माताके उस झूठी आशा—लोभ और धोखा देनेका उन बालकोंके साथ कैसा अभिनय करता है।

(७) बालककों भय दिखाकर अथवा मारने आदिके द्वारा उसे अपनी आज्ञामें चलाना मानों उसे आज्ञा उल्लघन करनेकी शिक्षा देना है। संभव है कि बालक दण्डके भयसे अपने सामने कोई बुरा आचरण न करे, परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि आखोंकी आड़ होते ही वह बुरे आचरणकी रही सही कमीको भी पूरी कर देता है। जो बालक अपने माता पितादिके द्वारा अधिक ताड़ना किये जाते है उन्हें ही साधारणपनें दुष्ट और दुराचरणी कहना चाहिए।

बालकोंको तो प्यारके साथ शिक्षा देकर वशीभूत करना चाहिए। जब प्रेमसे बालक वश हो जाते हैं तब सामने वा पीठ पीछे कभी उनके दुराचरण करनेकी संभावना नहीं की जा सकती। ऐसी हालतमें बालक जब कभी दुराचरण भी कर लेता है तब उसके साथ थोड़ीसी अप्रीति बतला दी जाती है तो वही उसके लिए बड़ा भारी दण्ड हो जाता है। उसवक्त उसके हृदय यह विचार उत्पन्न होता है कि “ आज मैंने अन्याय किया-बुरा काम किया—इसी लिए माता मुझसे प्यार नहीं करती है और न बोलती ही है। ” इस लिए फिर वह निरन्तर सावधान होकर रहते है।

(८) प्रेमके साथ बालकपर शासन करनेको छोड़कर और कोई शासन प्रणाली अच्छी नहीं है। बालकोंपर इसी प्रणालीसे शासन करना चाहिए। कठोर और कर्कश व्यवहार करनेसे अथवा भय दिखाने और मारनेसे उनके मनकी स्फूर्त्ति नहीं होने पाती। सदा शासनके भयसे वह डरपोंक हो जाता है और उसका स्वभाव भी कर्कश और नीच हो जाता है। जिस घरमें बालकोंके हृदयमें स्फूर्त्ति—चंचलता—नहीं है वहां बालक निर्भय चित्त होकर कभी खेल नहीं सकते। उन यमालय समान घरोंमें बालकोंकी मनोवृत्तिया स्फूर्त्तिवाली और तेजस्विनी होंगी यह कभी संभव नहीं। इस लिये उचित है कि हम उन्हें स्फुरित होने दें।

अपूर्ण।

मनकी मौज।

(१)

वर्तमान समयमें विचार स्वातन्त्र्यकी बड़ी कदर है। इंग्लेंडके तत्त्ववेत्ता जा० स्टु० मिलके कथनानुसार प्रत्येक मनुष्यको अपने विचारोंके प्रगट करनेका अधिकार है। और उनके प्रगट करनेसे मनुष्य समाजको कुछ न कुछ लाभ अवश्य पहुंचता है। मेरे मनमें तरह तरहके विचार उठा करते हैं पर सूमकी सम्पत्तिकी तरह वे अबतक किसीके उपयोगमें नहीं आते थे—जहाके तहां नष्ट हो जाते थे। पर अब आगे यह न होगा। मिल साहबकी सम्मति से अब मैं उदार बनता हूं और अपनी प्रत्येक मौजको सत्यवादीके द्वारा वितरण करनेके लिए मुक्तहस्त होता हू।

(२)

एक बूढे पण्डितजी बडे पक्के आराधक है । जैन समाजमें सैकडों उलट फेर हो गये—जमाना बदल गया, परन्तु उन्होंने अपना जय एक घड़ी भरके लिए भी न छोडा । ‘ छापेका क्षय ’ ‘ छापेका क्षय ’ करते करते उनकी उमर गुज़र गई । छापेके विरोधी देवता भी बड़े विकट निकले । अपने भक्तकी उन्होंने बड़ी कडी जाच की । जब बूढ़े बाबा अपनी सफर तै करनेके अन करीब पहुंच गये, तब कहीं उनके कानोंपर जूं रेंगी और वरदान देनेके लिए तैयार हुए । इस समय एकाधा नहीं कई देवता उनपर प्रसन्न हो गये है और उनकी एक निष्ठतापर लट्टू है । बूढे बाबा जो कहते है, वे उसी वक्त सिरके बल करनेके लिए तैयार है । अभी बाबाने कहा कि महाविद्यालयमें छपे हुए जैनग्रन्थ न पढाये जावें चट देवोंने कहा बहुत ठीक । उधर रत्नमाला जैनगजट आदि देव शक्तिया उनकी आज्ञाकारिणी हो ही रही है । अब बाबाको भरोसा हो गया है कि छापेको बहुत जल्दी जैन समाजसे खदे-ड़कर बाहर कर देंगे । मै समझता था कि इस खबरसे छापेके देवताओंमें बड़ी खलबली मचेगी, परन्तु यहा देखता हूं तो कुछ नहीं—सब अपने अपने कामोंमें मस्त है । एकसे पूछा तो उसने लापरवाहीसे हँसकर जबाब दिया—यह पचमकाल है । इसमें न पुराने देवताओंकी चलती है और न उनके भक्तोंकी । जैसे शंख देवता वैसे महाशंख उनके भक्त । कुछ दिन कूदफाद मचाकर आप ही आप ठंडे हो जायगे । ये बेचारे छापेको क्या खदेड़ेंगे ? उनके देवताओं तककी तो बिना छापेकी गति नहीं । तुमने क्या सुना नहीं

है कि रत्नमालाका नवीन प्रेसमें छपनेका प्रबन्ध हो रहा है !

(३)

मेरे एक मित्र कहते थे कि सारी दुनियांमें जितने साप्ताहिक पत्र निकलते हैं, उनमें शायद एक भी ऐसा न हो, जो जैनगजटकी बराबरीपर बिठाया जा सके। मै यह सुनकर जैनगजटके संपादक महाशयको एक पत्र लिखना चाहता था कि "आप हिन्दी न जान कर भी सिर्फ़ उर्दूकी लियाकतसे इतना अच्छा पत्रसम्पादन करते हैं। आपकी इस सफलताके लिए मैं बहुत भारी खुशी ज़ाहिर करता हूं।" परन्तु इतनेहीमें जैनगजट अंक ९—१० के दर्शन हुए। मैंने कवरपेजपर ही संपादकका लेख पढ़ा कि "यह जैनगजट सर्वगुण संपन्न है। यह समाजहितैषी, अनुभवी, दूरदर्शी धर्मात्माओं द्वारा सञ्चालन किया जाता है। यदि आपको अपना मनुष्यभव सफल करना है यदि आपको अपनी सन्तानको सुशिक्षित बनाकर उससे अपने कुलकी कीर्त्ति चिरस्थायी करनी है........तो जैनगजटको पढ़िये और पढाइए।" बस, मैंने पत्र लिखनेका विचार छोड़ दिया। जब सम्पादक साहबको खुद ही अपनी कामयाबीका फक्र है, तब मैं नाहक़ क्यों एक पैसा खर्च करूं। हां, महासभाके दफ्तरमें अलबत्तह एक मुबारिकबादीका ख़त लिख भेजूंगा।

(४)

प्रान्तिकसभा बम्बईकी सब्जैक्टकमेटीमें जब छापेकी चर्चा उठी और दो एक महाशयोंने उसका विरोध किया तब कुछ लोगोंने कहा कि यदि सभा छापेके ख़िलाफ है, तो वह जैनमित्र क्यों छपवाती है? इस पर एक पुराने, अनुभवी और धीर वीर सभ्यने

उठकर कहा–" भाइयो, आलस्यको छोड़ो और अपनी पुरानी राह-पर चलो। जैनमित्रका हाथसे लिखवाना क्या बड़ी बात है? जब छापा न था। तब क्या अपने पुरखोंका काम न चलता था। मेरी रायमें जैनमित्र जरूर हाथसे निकलना चाहिए। यह सुनकर मुझे उस चूहेकी बात याद आगई, जिसने बिल्लीके गलेमें एक घंटी बाँध देनेकी तरकीब बतलाई थी।

(९)

सहारनपुरके लाला जम्बूप्रसादजीने दो पंडितोंको रख छोड़े हैं। वे स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर दशसे चार बजेतक शास्त्रजी लिखते है। यदि बीचमें पेशाब वगैरहकी हाजत होती है तो उसे रफा करके फिर स्नान करते हैं, तब लिखते हैं। पाठशालाके विद्यार्थी भी स्नानादिसे शुद्ध होकर एक खास वक्तमें जैन शास्त्र पढ़ते हैं। जैनगजटमें यह समाचार पढ़कर मैं बहुत खुश हुआ। मेरी रायमें लाला साहबको इस विषयमें कुछ और तरक्की करना चाहिए। विलायतमे हिन्दू लोगोंके लिए एक तरहके बिस्कुट बनकर आते हैं। उनके बाक्सपर लिखा रहता हैं कि 'इसके बनानेमें मनुष्यके हाथ-का स्पर्श नहीं हुआ।' जब आप शुद्धताकी चरम सीमापर पहुँ-चना चाहते हैं, तब अपने लेखकोंको ऐसा अभ्यास कराइए, जिससे लिखते समय ग्रन्थसे उनका स्पर्श भी न हो। क्योंकि आखिर तो वे ग्रन्थ लेखनसे जीविका करनेवाले है–स्नानादिसे कहातक शुद्ध हो सकते हैं? विलायती कागजोंके समान देशी कागज भी बहुत अशुद्ध होते है, इस लिए पवित्रकागजोंका तो आपने इन्तजाम कर ही लिया होगा। न किया हो तो अब कर लीजिए और किसी शुद्धा-

न्यायी जैनीको शुद्धकागज वनानेका एक कारखाना खुल्वा दीजिए और बच्चोंको धर्मग्रन्थ पढ़ानेकी झझटमें तो आप पड़िये ही नहीं। शैतान बच्चे कहीं शुद्ध रह सकतें है? जब आप इस तरह सर्व प्रकार शुद्धताका इन्तजाम करलें, तब अपनी लेखनशालाको किसी प्रदर्शनीमें ले जानेका भी उद्योग करनेसे न चूकें।

(६)

दिगम्बरजैनके सम्पादकने वड़ी गलती की जो उसने अपने दीपमालिकाके अकमें जैनगजटके धर्मात्माओंका एक भी चित्र प्रकाशित न किया। जैनगजटका लिखना वहुत दुरस्त है। भला ऐसी जबर्दस्त गलतीपर कौन खामोश रह सकता है। जिन सेठों और विद्वानोंकी तारीफ करते करते वड़े वड़े लिक्खाडोंकी कलमें घिसी जाती है और आज जो अपनी सारी शक्तियोंको इस लिए खर्च-कर रहे है कि जैनसमाजको कहीं वर्तमान समयकी उन्नतिका भूत न लग जावे, उनके चित्र नहीं छापना और दूसरे यहां वहाके यहां तक कि विलायत गये हुए बाबूओं और भट्टारकों तककी भरती कर देना, यह क्या कोई छोटी मोटी गुस्ताखी है? इसकी सजा उसे जरूर देनी चाहिए और धर्मात्माओंकी मनस्तुष्टिके लिए श्रीमती रत्नमाला या जैनगजटका दीपमालिकाका खास अंक निकालकर उनके चित्र प्रकाशित करनेका उद्योग करना चाहिए।

मौजी।

सम्पादकीय विचार।

१—बम्बईमें रथोत्सव।

ता. २९ दिसम्बरसे ता. १ जनवरी तक यहा रथोत्सवकी बहुत चहल पहल रही। रथोत्सव बडे आनन्दके साथ समाप्त होगया। लग भग दो हजार बाहरके सज्जन इस महोत्सवमें सम्मिलित हुए थे। जैन समाजके प्रायः त्यागी, ब्रह्मचारी, विद्वान, धनिक आदि सभी उपस्थित हुए थे। जैसा समुचित सम्मिलन यहा हुआ था वैसे समागमकी अब बहुत कम आशा है। इस उत्सवके सम्बन्धमें वे बहुत धन्यवादके पात्र है जिन्होंने अपनी धीरतासे काम लिया था। उत्सवके अन्तिम विसर्जनके दिन श्रीयुक्त सेठ गुरुमुखराय सुखानन्दजीकी ओरसे प्रीतिभोजन हुआ था। उसमें खण्डेलवाल, अग्रवाल, पद्मावतीपुरवार, परवार, लमेचू, हूमड, चतुर्थ, पन्चम, सेलवाल आदि सभी जातिके सज्जन सम्मिलत थे।

१—बम्बई प्रान्तिकसभाका अधिवेशन और उसके सभापति।

इस रथोत्सवपर प्रान्तिकसभा बम्बईका अधिवेशन होना जब निश्चत हो गया तब इस विषयपर विचार चला कि अबकी बार अधिवेशनके सभापति कौन निर्वाचित किये जायँ? रथोत्सवकी प्रबन्धकर्तृसभाके सभासदोंकी रायसे निश्चित किया गया कि अबकी बार अधिवेशनके सभापति लखनउ निवासी श्रीयुक्त बाबू अजितप्रसादजी एम. ए. एल. एल. बी. वकील, निर्वाचित किये जायँ। बाबू साहब हमारी समाजके एक प्रतिष्ठित और उदार

चरित सज्जन हैं। इसमें सन्देह नहीं कि बम्बई सभाने आपको सभापति निर्वाचित कर बड़े महत्त्वका काम किया। इस आदर्श कार्यके उपलक्षमें वह अवश्य धन्यवादकी पात्र है। क्या हमारी और और सभाएँ प्रान्तिकसभाके इस महत्त्वके कामका अनुकरण कर जैन समाजको उपकृत करेंगी? यह बात अच्छी तरह ध्यानमें रखनी चाहिए कि समाजका हित साधन जितना निःस्वार्थ और उदार चरित विद्वान करेंगे उतना औरोंसे होना असंभव है।

सभापति साहबका आगमन ता. २५ दिसम्बरको हुआ था। उस समय आपके स्वागतके लिए बम्बईके प्रायः सभी दिगम्बर जैनसमाजके प्रतिष्ठित धनिक सज्जन स्टेशनपर गये थे। वहां-पर आपका बड़े उत्साह और हर्षके साथ पुष्पमाला आदिसे अपूर्व संमान किया गया था। इसके बाद बड़े उत्सव पूर्वक बैण्ड बाजेके साथ साथ आप शहरमें लाये गये थे। उस समयकी शोभाका रमणीय दृश्य वास्तवमें दर्शनीय था।

३—सभापतिके व्याख्यानमें हलचल।

तारीख २८ दिसम्बरको सभाकी पहली बैठक हुई। श्रीयुक्त प. धन्नालालजीने मङ्गलाचरण कर सभाका काम प्रारंभ किया। बाद श्रीयुक्त सेठ हीराचन्द नेमिचन्दजीके प्रस्ताव करनेपर सभा-पतिका चुनाव हुआ। सभापति साहबने सभाकी कृतज्ञता प्रकाशकर अपनी ओजस्विनी वक्तृता आरभ की। कुछ व्याख्यान होजानेके बाद जब आपने जातिभेदके सम्बन्धमें कहा कि—" धार्मिकबन्धुओ! इस त्यागी मण्डलकी स्थापनाके साथ २ आपको जातिभेदके अनावश्यक व शास्त्राज्ञाबाह्य बन्धनको भी शनैः २ ढीला करके सर्वथा तोड़

डालना चाहिए। हमारे शास्त्रोंमें वर्णाश्रम धर्म्मका लेख है, प्रायश्चित्तपाठोंमें भी वर्णोंका ही कथन है; भगवज्जिनसेनाचार्यकृत महापुराण भी इसहीकी साक्षी देता है कि आदिब्रह्मा श्रीऋषभदेवने क्षत्रिय वैश्य और शूद्र यह वर्णत्रय स्थापन किया और तत्पश्चात् उनके पुत्र भरत चक्रवर्तीने ब्राह्मणवर्ण स्थापन किया। इस प्रकार चार वर्णोंका व्यवहार कर्म्मभूमिकी आदिमें प्रारंभ हुआ था। अग्रवाल खंडेलवाल परवार, ओसवाल, हूमड़, शेतवाल आदि भेदोंका उल्लेख कहीं भी नहीं मिलता। और जैसे खण्डेला ग्रामके क्षत्रिय तथा इतर वर्णीय, जैनधर्म अंगीकार करनेवाले खण्डेलवालोंके नामसे विख्यात हुए, राजा अग्रकी सन्तानवाले अग्रवाल कहलाए; इस ही प्रकार अनेक जातियां उत्पन्न हुई और होती रहती हैं। इक्ष्वाकुवंश, हरिवंश कुरुवंश आदि वंशोंकी उत्पत्ति भी इस ही तरह हुई है। परन्तु जैसी खानापानादि व्यवहारकी संकीर्णता इस समय दिखलाई देती है वैसी पहले कभी नहीं थी। धार्मिक सिद्धान्त और प्रकृतिके अनुसार वर्णाश्रम बन्धनकी आवश्यकता तो प्रतीत होती है; परन्तु जातिभेद तो व्यर्थ उन्नतिबाधक व वात्सल्यघातक जंजीर है। इससे हमारी मूल वर्णाश्रम धर्म्मशृंखलाहीका पता जाता रहा। मुझे कोई कारण नहीं विदित होता कि जैनधर्म्मावलम्बिनी समान वर्णकी जातियाँ परस्परमें रोटीबेटीका व्यवहार क्यों न करें? न धर्म्म ही इसको रोकता है और न कोई लौकिक हित ही इससे होता है। जिन जातियोंमें जैन व अजैन दोनों धर्म्म प्रचलित हैं, उनमें यदि जैनकी अल्प संख्या होती है तो वे अजैनसे विवाह आदि व्यवहार करते हुए बहुत दुःख सहते हैं और उनकी पुत्रियोंको विवश जैनधर्म्म त्यागना पड़ता है। अजै-

नोंकी पुत्रियाँ जो उनके घरोंमें आती है वे जैन संस्कारसे शून्य होती हैं, जिससे भावी सन्तान भी जैनत्वशून्य ही रहती हैं। धर्म्मोन्नतिके प्रेमियो! जरा विचारो कि इस जातिबन्धनसे धर्म्मको कितनी हानि पहुँची है? इसे हठ और हानिकारक रूढ़ि न कहें तो क्या कहा जावे? अतः यदि आप धर्म्मोन्नतिके इच्छुक है तो वर्णाश्रम धर्म्मको दृढ कीजिए और जातिबन्धनको उच्छेद कर जैनधर्मकी वात्सल्य डोरसे जैनजातिको बलिष्ठ करनेका उद्योग कीजिए—आदि।" यह अंश हमारे बहुतसे भोले भाइयोंको बुरा जान पड़ा। उन्होंने शास्त्रकी मर्यादा और जातिके हानि लाभकी कुछ परवा न कर एक दम शोर मचा दिया। संभव है, उन्हें अपनी रूढ़िके सामने इस महत्त्वपूर्ण बातकी कुछ कीमत न जची हो! पर उन्हें इतना विचार तो अवश्य करना चाहिए था कि—समाजका प्रतिष्ठित विद्वान जो बात अपने मुहँसे कहेगा वह बहुत ही विचार और अनुभवके साथ। उसे अपने समाजकी वर्तमान परिस्थितिपर बड़ा भारी विचार रखना पडता है। उसमें भी अपठित और बहुत दिनोंसे अज्ञानके गड्ढेमें जो समाज गिरा हुआ है उसकी स्थितिपर तो और भी अधिक। फिर उसके द्वारा क्या हमें किसी प्रकार धक्का पहुच सकता है? जो स्वयं समाजकी सेवा करता है और उसके उन्नत करनेकी कोशिश करता है वह क्या उसका अहित भी चाहेगा? इतनेपर भी यदि उसके विचार हमारे शास्त्रोंसे मिल जावें तब तो हमें वे मानलेने चाहिएं। यदि वे इसपर विचार करते और आदिपुराण सरीखे आर्षग्रन्थकी मर्यादाका कुछ गौरव करते तो कभी उन्हें इस हलचलके करनेकी

तकलीफ न उठानी पड़ती। अस्तु। उन्होंने जिस विषयके लिए इतनी हलचल मचाई—आन्दोलन किया—परन्तु आश्चर्य है कि तब भी वे अपनी रूढिका पालन नहीं कर सके—उसे सुरक्षित नहीं रख सके। उन्हें जरूरी था कि वे स्वय तो अपनी रूढिका पालन करते? यदि वे जैनियोंमें परस्परके जातिभेदको अच्छा समझते हैं और उससे अपनी उन्नति समझते है अथवा यों कहलो कि वे इतनी उदारता दिखलाना नहीं चाहते कि जिससे जातिमें प्रेमका संचार हो तो क्या वे मुझे इस बातका उत्तर देकर अनुग्रहीत कर सकते है कि जिस समय सेठ सुखानन्दजीने सबका भोजन सत्कार किया था, उस समय हमारे जातिभेदको चाहनेवाले—खण्डेलवाल, अग्रवाल, परवार, पद्मावतीपुरवार, हूमड, चतुर्थ, पञ्चम, सेतवाल, लमेचू आदि जात वालोंके साथ क्यो जीम गये? वे समझावें तो कि बाबू अजितप्रसादजीने जब यही बात कही तब तो वे उखड़ खडे हुए थे और स्वय अपनी भूलपर उन्हें कुछ विचार नहीं हुआ? क्या यही विचारशीलता है? पर वास्तवमें बात क्या थी? क्यों इतनी हलचल की गई थी? इस विषयका जहातक हमने अनुसन्धान किया है उससे जान पडा कि यह कर्त्तव्य—यह हलचल मचाना—हमारे इन भोले भाइयोंकी बुद्धिका नहीं था। उनकी स्टीमके भरनेवाले तो दूसरे ही थे। उन्हीं—की कृपासे यह आन्दोलन उठाया गया था। इस लिए इस भूलके करनेवाले वे नहीं कहे जा सकते। तब साहजिक प्रश्न उठेगा। कि यह सब कार्रवाई किसकी थी? उत्तरमें हम अधिक न लिखकर पाठकोंको कुछ इशारा किये देते है। उसपर वे स्वय विचार करें। हमारे कितने जातिभाइयोंको बम्बईप्रान्तिकसभाके

अधिवेशनके होनेकी खबरसे एक प्रकारका भय हो गया था। भय क्यों ? यह एक विषम समस्या है। यद्यपि हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि इस समस्याका हल करना अपने ऊपर एक बला लेकर अपनेको अपराधी बनाना है, परन्तु तब भी अनुरोध वश कहना पड़ता है।

मथुरामें महासभाका जो अधिवेशन हुआ था, उसे हमारे पाठक भूले न होंगे। उसमे मनमानी जो जो कार्रवाइयांकी गईं वे सबपर विदित है। उसके नवीन कार्यकर्त्ताओंने सबसे बड़ी यह भूल की है कि उन्होंने उन लोगोंको, जिन्होंने अपने सुख दुःख, हानि लाभकी कुछ परवा न कर महासभाकी पूर्ण रूपसे निष्काम सेवा की थी, अलग कर दिये है। हम नहीं जानते उनका क्या अपराध था ? कौनसी उन्होंने महासभाको हानि पहुँचाई थी ! जिससे वे सभासे अलग किये गये। किस लिये महासभाने यह अन्याय किया ? क्या महासभाके कार्यकर्त्ता इसका समुचित उत्तर देकर अपने ऊपरसे इस दोषके हटानेकी कोशिश करेंगे ? देशकी जितनी संस्थाएं है उनमें तो कामके करनेवालोंकी जरूरत रहती है पर महासभा उल्टा काम करनेवालोंको अपनेसे अलग करती है, यह क्यो ? इसके गूढ़ रहस्य पर विचार कर यदि हम यह कहें कि सचमुच महासभा अब समस्त जैनियोंकी महासभा न रही तो कुछ अनुचित न होगा। क्योंकि अब उसे एक नया ही जामा पहाराया गया है। इसके अतिरिक्त नियमावलीका अनियम उलट फेर आदि और भी कितनी बातें मनमानी की गई थीं। संभव था कि महासभाकी इस मनमानी कार्रवाईका इस अधिवेशनमें प्रतिवाद किया जाता।

इसी विचारने उन्हें भयवान बना दिया था। इसका उन्हें पूर्ण खटका था। उसपर भी ऐसे समयमें जब कि बाबू अजितप्रसादजी सरीखे स्वाधीनचेता उसके सभापति हों। संभव है, पाठक हमारी इस कल्पनाका विश्वास न करें पर हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि यह बात बिल्कुल सत्य है। उन लोगोंके यहां कई लोगोंके पास पत्र आये थे। उनमें उन्होंने लिखा था कि "आपको इस विषयका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए कि हमारे विरुद्ध वहां कुछ कार्रवाई न की जाय, न महासभाके सम्बन्धमें कोई बात उठाई जाय और न उसकी किसी कार्रवाईका प्रतिवाद किया जाय। इसका भार सब आपके ऊपर है—आदि।"

वे लोग केवल पत्र लिखकर ही चुप न होगये। होवें क्यों, उन्हें तो इस विषयकी बडी भारी चिन्ता होगई थी न? इसलिये उन्हें और भी इसकाममें आगे बढ़ना पडा। उन्होंने कुछ आदमियोंको, जो कि अपनी खुशामद करनेवाले थे, अधिवेशनकी हर तरहसे असफलता होनेके लिए यहा भेजे। वे आये और उन्होंने जहांतक अपनेसे हो सका अधिवेशनकी असफलताके लिये प्रयत्न किया। भोले लोगोंको भली बुरी सुझाकर उन्हें अपनी ओर शामिल किये। सचमुच जिन लोगोंको संसारकी प्रगतिका कुछभी परिज्ञान नहीं है, जिन्हें उन्नति और अवनति एक सरीखी जान पड़ती है, अपनी भलाईके सिवा जिन्हें कभी यह ख्याल नहीं होता कि हमारी जातिकी आज कैसी भयानक स्थिति होगई है? उनका ऐसे कार्योंमें सहायता देना कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। इसका खयाल तो उन्हें हो सकता है जो जातिकी अवनतिको अपनी अवनति

और उन्नतिको अपनी उन्नति समझते हैं। यही कारण है कि उनका चक्र हमारे भोले भाईयोंपर चल गया। इसका जो परिणाम हुआ उसका हम पहले उल्लेख कर आये है। सब कुछ हुआ। अधिवशनकी असफलताके लिए कोई बात उठा न रक्खी गई। पर तब भी हमारी समझके अनुसार वे कुछ भी सफलता प्राप्त नहीं कर सके। हां उनके इस असामयिक अविचारसे इतना लाभ जरूर हुआ कि काम करनेवाले सज्जनोंमें एक नवीन शक्तिने अवतार ले लिया। पाठक थोड़े दिनों बाद जान सकेंगे कि यह शक्ति कितना काम करेगी?

४—कायरता।

हमें विश्वास था कि बम्बईसभाके उत्साही कार्यकर्त्ता अपना कार्य पूर्ण उत्साहके साथ करेंगे। उसमें किसी तरहकी कमी न आने देंगे। पर ता० २९ की मैनेजिंगकमेटीकी बैठकमें उनके उत्साहका हमें पूर्ण परिचय मिल गया। कुछ ही विरुद्ध पुरुषोंका उनपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे उस समय साधारण प्रस्तावोंके अतिरिक्त कुछ भी महत्त्वके प्रस्ताव पास नहीं करने पाये। हम नहीं जानते कि जातीय काम इतनी डरपोंकतासे किये जाते है। वे लोग बड़ी भूल करते हैं जो सामाजिक कामोंको अपमानके भयसे विरोधी लोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरुषोंके धैर्य और सहनशीलताका कुछ भी ज्ञान नहीं है। वे नहीं जानते कि जातीय कामके लिए उन्होंने अपने जीवनको भी कुछ नहीं गिना था। फिर जरासे अपमानसे हममें इतनी कायरता, इतनी असामर्थ्य क्यों? सच मुच उनकी यह भीरुता देखकर आश्चर्य

हुए बिना नहीं रहता। जैनसमाज अभी अज्ञानके गड्ढेमें बहुत गिरा हुआ है। उससे ऊद्धार करनेमें बडी कठिनाइया सहनी होंगीं। रूढ़िके गुलामोंके विरुद्ध आन्दोलन करना पडेगा। उनकी गालिया सुननी पडेंगीं। तिरस्कार सहना होगा। तब कहीं आप अपना अभिष्ट लाभ कर सकेंगे। यदि आपमें यह शक्ति है, और सच्चे हृदयसे आप समाजका उद्धार करना चाहते है तो इस भीरुताको जलाजलि दे डालिए। मानापमानको पास तक फटकने न दीजिए। हम विश्वासके साथ कहते है कि आप उस हालतमें बहुत कुछ समाजका हित कर सकेंगे। और यदि इतनी सहनशीलता—अकायरता—नहीं है तो घरमें बैठ जाइये। कायरोंसे दूसरोंका हित नहीं हो सकता। देशका तथा जातिका कल्याण उसी महात्माके द्वारा होगा जो अपने जीवनकी कुछ परवा न कर लोकहितमें लगेगा। भारतवर्षका इतिहास ऐसे वीरोंसे भरा हुआ पडा है। हमें भी उन्हीं महात्माओंसे आत्मसमर्पण करना सीखना चाहिए।

५—नवीन शक्तिका अवतार।

यह बात स्वाभाविक है कि उन्नति संसारमें जब पुरानी शक्तियां ढीली हो जाती है और उनमें काम करनेकी हिम्मत नहीं रहती। अथवा वे कायरतासे अपनेको कार्यक्षेत्रमें आगे नहीं बढा सकतीं तब नियमसे नवीन शक्तिका प्रादुर्भाव होता है। जैन समाजके प्रधान नेता भगवान् समन्तभद्र और अकलक आदि निष्काम योगियोंका ऐसे ही समयमें अवतार हुआ था। उस समय उनके द्वारा जैसी जैनधर्मकी प्रगति हुई थी वह किसीपर अविदित नहीं है। ठीक वही समय आज हमारे लिए फिर आ उपस्थित हुआ है।

हमारे खूनकी तेजी बहुत शीतल हो गई है। यहां तक कि हम अपने आप तकको भूल गये है और धीरे धीरे नीचेकी ओर चले जा रहे हैं। अज्ञानकी असीम राज्यसत्ताने हमें परवश और अपना गुलाम बना लिया है। इस हालतसे हमारा उद्धार होनेके लिए अब नवीन शक्तिके अवतारकी जरूरत है। क्योंकि जिन पुरानी शक्तियोंके ऊपर हमें भरोसा था—अपने उद्धारका पूर्ण विश्वास था—उनमें कुछ तो कछुवेकी तरह मन्द मन्द चलनेमें ही अपना भला समझती है और कुछ ऐसी है जिनमें स्वार्थियों, मायावियों, समाजके शत्रुओंकी ही अधिक भरती होगई है। इससे अब उनपर विश्वास रखना—उनसे भलाईकी आशा करना—निष्फल जान पड़ता है। यद्यपि ऐसी महाशक्तिके उद्भव होनेमें अभी बहुत कुछ विलम्ब है, परन्तु फिर भी यह लिखते बडी खुशी होती है कि बहुतसे विद्वान् और समाजकी निष्काम सेवा करनेवालोंकी एक मण्डली सगठित होगई है। उसका नाम **दिगम्बरजैनमहामण्डल** है। इसका उद्देश्य देश विदेशमें जैनधर्मका प्रचार करना है। इसके द्वारा एक साप्ताहिक पत्रका भी जन्म होना निश्चित हो चुका है। पत्रका नाम **जैनभानु** होगा। इसका पालन-सम्पादन-हमारी जातिके अपूर्व विद्वद्रत्न स्या० वा० न्यायवाचस्पति प० गोपालदासजीके द्वारा होगा। परमात्मासे इस मण्डलके कर्मवीर होनेकी प्रार्थना करते है। इस नवीन शक्तिके द्वारा बहुत कुछ समाजसुधारकी आशा की जाती है।

६—आत्मपतन।

मनुष्य चाहे मूर्ख हो अथवा पढ़ा लिखा, वह स्वार्थसे अपनेको कहा तक गिरा सकता है, कहां तक लोगोंकी दृष्टिमें घृणास्पद बना-

लेता है, इसका बहुत कुछ प्रतिभास बम्बईसभाके अधिवेशनमें हुआ है। पहले विश्वास तो यह था कि मनुष्य चाहे कितना ही स्वार्थी क्यों न हो तब भी वह अपने स्वार्थके लिए, स्वार्थ भी केवल इतना ही कि हमारे अन्नदाता हमसे खुश रहें, बड़े भारी जन समुदायका अहित न करेगा। परंतु अब वह विश्वास नहीं रहा। उसके स्थानमें यह श्रद्धा जम गई कि पैसेका गुलाम, चाहे वह पढ़ा लिखा ही क्यों न हो, अधमसे अधम काम भी कर सकता है। अपनी तुच्छाति-तुच्छ मलिन वासनाके लिए अपनी जातिका, अपने देशका अकल्याण कर सकता है। उनकी उन्नतिके कारणोंको धूलमें मिलानेकी जी जानसे चेष्टा करनेके लिए उतारु हो जाता है। ऐसे मनुष्योंको यदि हम समाज और देशके दुश्मन कहें तो कुछ अनुचित नहीं जान पड़ता।

जबसे अभागे जैन समाजमें दस्मे और बीसोंके झगडेने अवतार लिया है तबहीसे कुछ लोगोंने उसे जातीय झगडेका जामा पहराकर बहुत कुछ आन्दोलन करना आरभ किया है। इसका परिणाम समाजके लिए कैसा हुआ इससे सब परिचित है। महा सभाने, जो भारत वर्षके सब जैनियोंके हितके लिए स्थापित हुई थी, प्रादेशिक रूप धारण कर लिया है। और अब वह कुछ गिनतीके लोगोंकी सभा गिनी जाने लगी है। कई धार्मिक संस्थाए जो समाजमें विद्यावृद्धिके लिए स्थापित है और अपनी शक्तिके माफिक समाज सेवा कर रही है वे कुछ अनुदार हृदयी पुरुषोंको काटेकी तरह चुभ रहीं है। उनकी अभिवृद्धि उन्हें सुहाती नहीं है। क्यों ? यह बतलाना अपनेको अपराधी बनाकर गालिया सुननेका पात्र बनाना है। सामाजिक पत्र, जिनका उद्देश्य—कर्त्तव्य-

समाज सुधार है, वे आज किस खूबीसे—कैसे पाण्डित्यके साथ—सम्पादित किए जाते हैं यह बतलानेको हम लाचार हैं। समझदार पाठक स्वयं समझते हैं। हमारे अभागे समाजमें पत्र सम्पादनका यही मतलब समझा गया है कि उनके कलेवर किसी तरह काले हो जाने चाहिएं। फिर चाहे उनमें अच्छे अच्छे लेख न हों, उनसे किसीका हित न होता हो, समाजमें उल्टा उनसे बुराई होती हो, भले ही उनके द्वारा अपनी अधम मनोवृत्तिया खुश करनेके लिए दूसरेकी निन्दा की जाती हो, दूसरोंको मनमानी गालियां दी जाती हो, उनसे कुछ भी हानि नहीं समझी जाती। हमें प्रसंग पाकर लिखना पड़ता है कि हमारी जातिके एक प्रतिष्ठित नेताने एक मान्य पत्रके संपादकको इस बातकी चेतावनी की थी कि आप अमुक पत्रके साथ ही अपने लड़ाई झगड़ेका सम्बन्ध रक्खें हम अमुक पत्रको इस विषयसे निष्कलंक रखना चाहते है। परन्तु यह लिखना उनका एक समझदारकी आखोंमें धूल डालनेके मानिन्द था और बिल्कुल बनावटी था। यदि यह बात उन्होंने शुद्ध हृदयसे लिखी होती तो क्या वे अपनेको उसी कलकसे न बचाते ? क्यों वे स्वयं घृणित वासनाके दास बनकर अपनी लेखनीका दुरुपयोग करने लगते ? छिः समाजके हितैषीपनेकी डींग मारनेवाले इतने बड़े नेताके लिए यह बड़ी भारी लज्जाकी बात है। सच है पर उपदेश कुशल बहुतेरे दूसरोंके दोष सब दिखा सकते है पर अपने दोषोंपर किसीकी दृष्टि नहीं पड़ती। परन्तु यह मनुष्यता नहीं है।

इस समय हमारी जातिमें जितनी बुराइयां पैदा हो रही है, वे सब स्वार्थकी वासनासे मलीन और संकीर्ण हृदयी पुरुषोंकी कृपाका

फल है। वे अपने व्यक्ति गत द्वेषको भी समाजकी छातीपर पटक कर उसके सर्व नाशके लिए कोई बात उठा नहीं रखते और फिर उस अकर्त्तव्यको वे सफलता समझते है। पर यह सफलता ऐसी ही है कि बुराई करके उसे अज्ञानतासे भलाई समझना। बुद्धिमान् इस सफलताका आदर नहीं करते। किन्तु उसे घृणाकी दृष्टिसे देखते है। हा इस हलचलसे इतना तो अवश्य हुआ कि ऐसे बडे समारोहमें बम्बईसभाके लिए कुछ द्रव्य संचित हो जाता, अथवा बाहरकी संस्थाओंके लिए भी कुछ सहायता मिल जाती, वह इन जासूओंकी समाजपर सुदृष्टि रहनेसे न होने पाई। धार्मिक कार्योंमें दान देकर--उन्हें सहायता पहुचा कर--जो हमारे भाई पुण्य सम्पादन करते उसे इन श्रीचरणोंने अपनी वीरतासे खूब हगाम मचाकर सम्पादन न करने दिया और उस श्रेयके बदलेमें एक नवीन श्रेय स्वय सम्पादन कर लिया। मनुष्य स्वार्थके पाशमें बद्ध होकर कितना अन्याय कर सकता है, कहा तक अपने आत्माको गिरा सकता है यह हमने भी खूब जान लिया। और साथ ही यह विश्वास कर लिया कि स्वार्थसे--तुच्छातितुच्छ स्वार्थसे--अपने अनन्त शक्तिशाली आत्माको नीचेसे नीचे गिराने वाले पैसेके गुलाम और सकीर्ण हृदयी पुरुषोंकी हमारी जातिमें कमी नहीं है। पैसे! तू धन्य! तेरे गुलाम सब कुछ करनेको तैयार रहते हैं। इसी लिए तुझे धन्यवाद देना पड़ता है। अधिक क्या मूर्ख तो तेरी गुलामी करते ही है, परन्तु पढ़े लिखे, बुराई और भलाईको जानने वाले विद्वान् भी तेरे अनन्य दास होते दीख पड़ते है। तेरी कृपासे जो कुछ हो वह थोड़ा है। अस्तु।

७–श्रीमन्धरस्वामीके नाम खुली चिट्ठियां।

हमने इस अङ्कसे उक्त शीर्षककी चिट्ठियां प्रकाशित करना आरंभ की है। इन चिट्ठियोंके लेखक श्रीयुक्त वाडीलाल मोतीलाल शाह हैं। आप जैनसमाजमें एक स्वतंत्र और उदारचरित लेखक है। आपके विषयमें हम अधिक क्या कहें, जिन्होंने आपके द्वारा सम्पादित जैनसमाचार और जैनहितेच्छु पत्र पढ़े हैं, वे आपकी योग्यता और विद्वत्ताका अनुमान स्वयं कर सकते है। इसके अतिरिक्त ये चिट्ठिया भी आपकी प्रतिभाशालिनी बुद्धिका परिचय करा सकती है। इन चिट्ठियोंको लिखकर आपने जैनसमाजको बहुत कुछ सचेत किया है।

इनमें जैनसमाजके अधःपतित अवस्थाका चित्र बड़ी मार्मिकतासे अङ्कित किया गया है। पढनेसे हृदयपर एक गहरी चोंट लगती है। प्रकाशित चिट्ठीको पढकर पाठक स्वय अनुभव कर सकेंगे। जातिकी दशाका ज्ञान करानेके लिए हम क्रमसे इन्हें प्रकाशित करेंगे। हमारी जातिकी इस समय बडी बुरी हालत हो रही है। हमें आशा है कि जातिके शुभचिन्तक अपनी पतित अवस्थापर अवश्य ध्यान देकर उसके उद्धारका उपाय करेंगे।

हमें यह जानकर बडा दुःख हुआ कि उक्त महानुभावने समाज सेवासे अपना हाथ खींच लिया है। इसमें सन्देह नहीं कि इसका कुछ कारण अवश्य है। पर हम यह कहना भी अनुचित नहीं समझते कि जातिको आप सरीखे नररत्नोंकी बड़ा भारी जरूरत है। आप सरीखे स्वाधीनचेताहीके द्वारा जातिका भविष्य अच्छा बन सकेगा। हम आशा करते है कि आप हमारी प्रार्थनापर ध्यान देंगे।

८—क्या जैनसमाजका सुधार होगा ?

एक ओर तो इसके शुभचिन्तकोंका यह प्रयत्न चल रहा है कि जैनसमाज एकताके पवित्र बन्धनमें बधकर अपने लिए उन्नतिका मार्ग सरल करे और दूसरी ओर कुछ कुलकलंक इसे और भी पतित करना चाहते है। वे दिनपर दिन इसके उन्नतिके मार्गको विषम बना रहे है। जहा देखो वहां आपसमें—भाई भाईमें—साधारण साधारण बातोंके लिए ईर्षा और द्वेषकी अग्नि भड़काना चाहते है। एक स्थान ऐसा है जहा मिलकर और शान्तिके साथ काम किया जाय तो उससे किसीकी हानि नहीं होती और न द्रव्य और समयका दुरुपयोग होता है। पर न जाने यह शान्ति उन्हें क्यों अच्छी नहीं लगती है? क्यों उन्हें एक एक दानेके लिए ठोकरें खाते फिरते अपने भाइयोंपर दया न आकर अदालतोंमे लाखों और करोंडों रुपयोंपर पानी फेरना अच्छा जान पड़ता है? क्यों वे अपने ऋपियोंके—

"स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथोपैतकैतवा।
प्रतिपत्तिर्यथायोग्य वात्सल्यमभिलप्यते॥

अपने भाइयोंके साथ छल–कपट–रहित पवित्र भावोंसे प्रेम करना चाहिए, इन पवित्र वचनोंको भूल गये? क्यों उन्हें अपनी इस भूलपर खेद नहीं होता?

पाठक! आपने पढ़ा होगा कि सम्मेदशिखरपर्वतपर अपना हक्क सिद्ध करनेके लिए हमारे कुछ श्वेताम्बरी भाइयोंने दिगम्बरियोंपर मुकद्दमा चलाया है। हमें इसमें पूर्ण संदेह है कि वह पर्वत केवल श्वेताम्बरियों अथवा केवल दिगम्बरियोंके हाथमें आकर उसपर एकका मौरुसी हक्क

होजाय? पर हा इतना अवश्य होगा कि दोनों ओरका बहुतसा रुपया तो बरबाद हो चुका है और अभी बहुत होना है। इसीके लिए यह मुकद्दमें बाजीका नवीन सूत्रपात हुआ है। देखते है,हमारे श्वेताम्बर भाई लाखोंपर पानी फेरकर कितनी सफलता प्राप्त करते है! क्या ही अच्छा होता यदि वे अपने दुखी भाइयोंके लिए इस धनका सदुपयोग करते? आज जैनसमाज दिनपर दिन अज्ञानके गढ्ढेमें गिरता चला जा रहा है, उसका उद्धार करते! यदि हम थोड़ी देरके लिए इस असत्य ही कल्पनाको सत्य समझलें कि पर्वत श्वेताम्बरियोंको मिल गया तो क्या उससे सब श्वेताम्बरी मोक्ष चले जावेंगे और फिर दिगम्बरियोंको कभी मोक्ष मिलेगा ही नहीं? यह कितने खेद की बात है कि एक ओर तो जैनधर्मकी इतनी उदारता कि वह संसार भरको अपने उदरमें रखनेकी शक्ति रखता है और दूसरी ओर उसके धारकोंमें इतनी अनुदारता—इतनी संकीर्णता—कि वे सर्व मान्य स्थानको केवल अपना ही आराध्य बनाना चाहते है? यह तो वही हुआ कि किसी जैनधर्म स्वीकार करनेवाले अन्यमतीको यह कहना कि जैनधर्मके ग्रहण करनेका तुम्हें कुछ अधिकार नहीं है। वह हमारी मौरुसी सम्पत्ति है। पर यह समझ भूलभरी है। और इसीसे हमारी जातिका सर्वनाश हुआ है। अब हमें इन झगडोंका समाजसे काला मुँह करना चाहिए। हमारे पास पैसा बहुत है तो उसे इस-तरह व्यर्थ नष्ट न कर उसका हमें सदुपयोग करना चाहिए। जरा जातिकी हालत देखनेके लिए आखें खोलो, तब जान पडेगा कि हम इसी पिशाचिनी फूटसे भीतर ही भीतर कैसे घुने जा रहे है। जैनधर्म शान्ति-मय धर्म है। पर आश्चर्य है कि हम उस शान्तिको—प्यारी शान्तिको—भूले

जा रहे हैं? वह दिन जैनियोंके लिये कितना उत्तम होता जिस दिन उनका धन इन मुकद्दमोंके द्वारा आमिषभोजियोंके पेटमें न पड़कर-उससे हिंसाका प्रचार न होकर—जातिके लिए व्यय होता। जातिमें विद्यामंदिर और जिनवाणीभवन आदिकी स्थापना होती और उनके द्वारा जातिमें नई शक्ति पैदा होती? यही सब देखकर प्रश्न उठता है कि क्या जैनसमाजका उद्धार होगा?

स्त्रीशिक्षा।

यदि हम यह कहें कि देश और जातिकी उन्नति स्त्रीशिक्षापर निर्भर है तो कुछ अनुचित न कहा जा सकेगा। स्त्रीशिक्षाका कितना महत्त्व है यह शब्दोंके द्वारा समझाना कठिन है। संसारके प्रायः सभी प्रसिद्ध विद्वानोंने यह बात मुक्तकण्ठसे स्वीकार की है कि जिस देशमें, जिस जातिमें और जिस गृहमें स्त्रीशिक्षाका प्रचार नहीं है वह देश, वह जाति और वह गृह कभी उन्नत नहीं हो सकते। भारतका जो आज सीमान्त अधःपात हो गया है उसका प्रधान कारण स्त्रीशिक्षाका भी अभाव है। और जबतक इसका यथेष्ट प्रचार न होगा तबतक पतित भारत उन्नत होगा यह संभव नहीं।

इसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकता कि मूर्ख स्त्रीके द्वारा समाज या देशको किसी तरहका भी लाभ नहीं पहुंच सकता। और तो क्या जब वह सन्तानपालन, गृह प्रबन्ध आदि जरूरी कामोंका भी पालन अच्छी तरह नहीं कर सकती तब उसके द्वारा किसी भारी महत्वके कामका सम्पादन किया जाना कैसे संभव माना जा सकता है? उसे स्वयं इस बातका ज्ञान नहीं है कि मेरा कर्तव्य क्या है?

मुझे किस मार्गपर चलनेसे लाभ होगा? तब वह क्या अपना, क्या अपनी संतानका और क्या अपने घरका सुधार कर सकेगी? यह कौन नहीं जानता की स्त्रीशिक्षाके न होनेसे भारतकी जातियां दिनपर दिन कैसी कैसी भयंकर कुरीतियोंका घर बनी जा रहीं हैं। क्या यह कभी संभव था कि जहांकी भूमिको सीता, मैनासुन्दरी, अञ्जना, द्रौपदी, मनोरमा आदि देवियोंने भूषित की थी—अपने चरणोंसे पवित्र की थी· वहाकी स्त्रिया अब ऐसी उत्पन्न होंगी कि वे स्वार्थके वश हों अपनी प्यारी पुत्रियोंको बूढे, मूर्ख, कुरूप आदिके गले बाधकर उनके सुखमार्गमे काटे बनेगीं? पर यह सब इसी एक स्त्रीशिक्षाके न होनेका प्रभाव है। और इसीसे उन्हें अपना हानि लाभ नहीं सूझ पड़ता। इस लिए क्यों यह जरूरी नहीं माना जाय कि स्त्रीशिक्षाकी बड़ी जरूरत है और बहुत बडी जरूरत है। स्त्री पतिकी अर्द्धांगिनी मानी जाती है, पर यह याद रहे कि अनपढ़ी स्त्री अर्द्धाङ्गिनी कभी नहीं हो सकती। क्योंकि उसके द्वारा किसी तरहकी मदद पतिको नहीं मिलती है। विना विद्याके स्त्री सिवाय रोटी बनाने और पानी भरनेके किसी कामकी नहीं होती। उसे यदि इनके सिवा कुछ काम भी सूझता है तो वह दूसरोंकी निंदा करनेका। चार निठल्ली औरतें शामिल बैठकर इधर उधरकी निंदा करना अपना काम समझती हैं और जो इस कामको जियादह खूबीसे करती है वही इनमें चौधरानी समझी जाती है। ये मंदिरमें दर्शन करने और शास्त्र सुनने जाती हैं परन्तु चित्त निन्दामय होनेके कारण न हृदयसे वे दर्शन कर सकती है और न शास्त्रके उपदेश को हीं हृदयमें जमा सकती है। ऐसी सूरतमें जैसा कुछ पुन्यफल मिलना चाहिए वह नहीं मिलता, क्या इन बातोंके सुनने पर भी यह संदेह

रह जाता है कि स्त्रीशिक्षा न होनी चाहिए। और और देशोंकी स्त्रियां कितने उंचे दरजेपर पहुंच गई हैं कि जिन्हें देखकर प्रत्येक स्त्रीशिक्षाका प्रेमी प्रसन्न हो सकता है। उनके लिखे हुए आज हजारों अच्छे अच्छे ग्रंथ है जिन्हें देख कर अच्छे अच्छे विद्वान् आश्चर्य प्रगट करते हैं। भारतकी नारियां भी अपनेमें वही शक्ति रखती है, परन्तु बुरा हो इस अविद्याका जिसने उनकी शक्तिको ढक दिया है। प्रत्येक देशहितैषीको सबसे पहले स्त्रीशिक्षापर अच्छी तरह ध्यान देना चाहिए। सब मुल्क-जग गये हैं। जापान स्वर्गभूमिके समान सुख भोग रहा है। चीनने भी अपनी पिनक छोड़दी है। पर भारत—जगद्गुरुभारत—ही आज सबसे पीछे पड़ा हुआ है। क्यों? केवल शिक्षाके न रहनेसे। प्यारो! अब इस बातकी आवश्यक्ता है कि स्त्रीशिक्षाका खूब प्रचार किया जाय।

स्त्रियोंको शिक्षा मिलनेसे कितना जल्दी सुधार होता है इस बातको वे लोग बहुत अच्छी तरहसे जान सकेंगे जिन्होंकी निगाह चीनको देखती रही है। आजसे दश वर्ष पहले चीनमें न समाजकी तरफसे और न सरकारकी ही तरफसे स्त्रियोंके लिये स्कूल या कालेज था। पर इस दश वर्षके अर्सेमें उन्होंके स्त्रीशिक्षाके प्रचारसे आज चीनके केवल एक प्रांतमें ७१२ पाठशाला और कई एक कालेज स्थापित हैं। उनमे स्त्रियोंको इतिहास, साहित्य, गणित, सन्तानपालन, कला-कौशल आदि सभी विषयोंकी शिक्षा दी जाती है। उसीका आज यह फल दीख पड़ता है कि वहां की स्त्रियां संसारमें वह काम कर रहीं

है जो आश्चर्यमें डुबोये देता है। न जाने ऐसा पवित्र दिन भारतके लिए कब आवेगा जब भारतकी स्त्रियां भी अपने कामसे संसारको मुग्ध करने लगेंगीं ?

भारतके प्यारे पुत्रो ! अब तो अपने देशकी परिस्थितिपर ध्यान दो। वह बहुत दिनोंसे गिरता ही चला जा रहा है। सबसे पहले उसके लिए तुम्हारा कर्त्तव्य है कि जैसे उसकी प्यारी पुत्रियां पढ़ लिखकर उसकी सेवा करनेके लिए तैयार होने लगें, वैसा ही तुम काम करो।

स्त्रीशिक्षाका प्रेमी—
माणिकचन्द सेठी झालरापाटन।

पुस्तक-समालोचन।

धर्मप्रश्नोत्तर—मूलग्रन्थ सकलकीर्त्ति भट्टारकका बनाया हुआ है। हिन्दी पं. लालारामजीने की है। पं. पन्नालालजी वाकलीवालके द्वारा प्रकाशित किया गया है। कीमत दोनों खण्डकी २) है। मिलनेका पता पं. पन्नालालजी वाकलीवाल ठि. मैदागिन जैनमन्दिर बनारस सिटी।

सारे ग्रन्थमें प्रश्नोत्तरके द्वारा धार्मिक विषय बड़ी खूबीसे समझाया गया है। समझानेकी प्रणाली सरल है। हर एक विषय बड़ी जल्दी समझमें आ सकता है। ग्रन्थ जैनियोंके बहुत कामका है। अच्छा होता यदि प्रकाशक पंडितजी भाषाके साथ साथ मूलग्रन्थकर्त्ताकी सरल संस्कृत भी लगा देते। ग्रन्थ मोटे कागजपर सुन्दरताके साथ छपा है।

दिगम्बरजैन—सूरतसे इस नामका गुजराती भाषामें कोई पांच वर्षसे एक पत्र निकलता है। उसके सम्पादक श्रीयुक्त मूलचन्द किसनदास कापड़िया हैं। वार्षिक मूल्य उपहारके ग्रन्थ सहित १॥।) हैं।

छठे वर्षके आरंभमें कापड़ियाजीने इसका खास अङ्क निकाला है। वह हमारे सामने उपस्थित है। उपयोगी लेखोंके अतिरिक्त त्यागी, मुनि, विद्वान, और सद्गृहस्थोंके लगभग ६० चित्र भी दिये गये हैं। अङ्ककी सुन्दरता देखते ही बनती है। दिगम्बर जैन समाजमें इस प्राथमिक और नवीन परिश्रमके लिए हम कापड़ियाजीको बधाई देते हैं।

छठे वर्षके उपहारका पहला ग्रन्थ मनोरमा है। यह ग्रन्थ शीलकथाके आधारपर गुजराती भाषामें लिखा हुआ है। जिसे हम अबला कहते हैं वह अपने शीलकी किस वीरताके साथ रक्षा करती है यही इसमें बताया गया है।

उपहारका दूसरा ग्रन्थ हनूमानचरित्र है। यह हिन्दी भाषामें पद्मपुराणकी एक कथाके आधारपर लिखा गया है। इसके लेखक खण्डवा निवासी सुखचन्द पद्मसाह हैं। इसकी हिन्दी बहुत कुछ परिमार्जित होना मांगती है। उपहारके दोनों ग्रन्थ पृथक भी छह छह आनेमें सूरत चन्दावाड़ीके पतेपर मिल सकते हैं।

सर्वार्दशकुण्डलीसागर—लेखक और प्रकाशक बालाजी गोविन्द हर्डीकर दैवज्ञ हैं। मिलनेका पता—पी. एम. आगवेकर महेश्वरीमहाल नियर कांचमन्दिर कानपुर। कीमत १) रु। यह फलित ज्योतिषका ग्रन्थ है। इसमें सन्देह नहीं कि लेखक महाशयने इस-

पर बड़ा परिश्रम किया है। पर खेद है कि इस विषयमें हमारा अनधिकार होनेसे हम इसके गुण दोषोंकी विवेचना करनेमें असमर्थ हैं। हां इतना कहना अच्छा समझते हैं कि फलितज्योतिषके अनुरागी इससे बहुत लाभ उठा सकेंगे। हमें यहांपर अभ्युदयमें प्रकाशित एक पुराने विज्ञापनकी स्मृति हो उठी है। यदि हमारे फलितसारसंग्रहके विद्वान् लेखक महाशय उसके सम्बन्धमें कुछ प्रयत्न करते तो जनसाधारणका बड़ा उपकार होता। न जाने क्यों आपका ध्यान उधर नहीं गया? संभव है वह विज्ञापन आपके अवलोकनमें न आया हो। हम फिर भी उसकी ओर पंडितजीका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। पुस्तक साधारणतः अच्छी छपी है। पर कीमत अधिक जान पड़ती है।

विद्वद्रत्नमाला—लेखक श्रीयुक्त नाथूरामजी प्रेमी। प्रकाशक जैनमित्र कार्यालय। यह पुस्तक अबकी वर्ष जैनमित्रके उपहारमें दीगई है। इसका विषय ऐतिहासिक है। इसमें जिनसेन, गुणभद्र, आशाधर, अमितगति, वादिराज, मल्लिषेण और समन्तभद्राचार्य इन सात माहात्माओंकी गवेषणापूर्वक जीवनियां लिखी गई है। इसके पढ़नेसे लेखककी ऐतिहासज्ञताका पूर्ण परिचय मिलता है। लेखक महाशयने इस पुस्तकका संकलन कर गढ्ढेमें गिरे हुए जैन साहित्यका बड़ा उपकार किया है। जैनियोंके अतिरिक्त जन साधारण भी इसके द्वारा जैन साहित्यकी बहुत कुछ बातें जान सकते हैं। पुस्तककी छपाई आदि सुन्दर है। दश आने खर्च करनेसे पृथक भी मिल सकती है। पत्र, बम्बई ४ हीराबागके पतेपर लिखना चाहिए।

अनुभवानन्द—लेखक श्रीयुक्त ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी। प्रकाशक जैनमित्र कार्यालय। यह जैनमित्रके उपहारकी दूसरी पुस्तक है। विषय नामहीसे स्पष्ट है। पुस्तक अध्यात्मप्रेमियोंके बड़ी कामकी है। वे इसे एक वक्त अवश्य पढ़ें। यह हमारा उनसे अनुरोध है।

लिखितशास्त्रार्थ—जैनियों और आर्यसमाजियोंमें जो लेखिक शास्त्रार्थ चल रहा था उसीका इस पुस्तकमें संग्रह किया गया है। किसका पक्ष प्रबल और किसका निर्बल है इस विषयमें हम कुछ न लिख कर इसका भार विचारशीलोंके ऊपर छोड़ते हैं। पुस्तककी कीमत दो आना है। मिलनेका पता बा. चन्द्रसेन जैन वैद्य इटावा सिटी।

षष्ठवार्षिक विवरण—भारतवर्षीय जैनशिक्षाप्रचारकसमितिकी छटे वर्षकी रिपोर्ट। इसके देखनेसे समितिके कार्यकर्त्ताओंके असीम साहस परिचय मिलता है। जैनियोंकी सब संस्थाओंमें हमारे विश्वासके अनुसार यही एक उत्तम संस्था है। यह इसीके साहसका काम है जो पास एक पैसा न होनेपर भी वार्षिक बजट १५०००, का पास करती है। जातिकी सच्ची और निष्कामसेवा करना इसीको कहते हैं। क्या हमारी बड़ी बड़ी संस्थाएँ इस आदर्श संस्थाके द्वारा कुछ शिक्षा ग्रहण करेंगी?

सप्तमवर्षीय रिपोर्ट—दिगम्बर जैनप्रान्तिकसभाबम्बईका सात वर्षका संक्षिप्त हाल। इसके पढ़नेसे जान पड़ा कि सभाने सात वर्षोंमें कोई भारी महत्त्वका काम नहीं किया। हां केवल उपदेशक फण्डका काम और और संस्थाओंकी अपेक्षा अच्छा चला। पर अब उसमें भी विघ्न आता जान पड़ता है। क्योंकि उपदेशक फण्डमें जितना

द्रव्य था वह खर्च हो चुका। अब कुछ थोड़ासा बाकी है। संभव है उसके द्वारा चार छह महीने और काम चल सके। हम नहीं मानते कि जिस संस्थामें बड़े बड़े धानिक शामिल है, उसकी यह हालत क्यों? जान पड़ता है उसके मालिक ऐसे जातीय सुधारके कामोंको पसन्द नहीं करते है। करें क्यों? जिनका धन असामयिक, अनुपयोगी और जातिके नष्ट करनेवाले कामोंमें बड़ी उदारताके साथ खर्च होता है उन्हें इन कामोंसे जरूरत? उनके लिए जाति कल नष्ट होती हो तो वह आज ही हो जाय, उन्हें इसका कुछ दुःख नहीं। ऐसे लोगोंके विचारोंपर खेद होता है। जातिके बुरे दिन यही कहलाते है।

प्रथमवार्षिक विवरण—श्रीऋषभब्रह्मचर्याश्रमके प्रथम वर्षका संक्षिप्त हाल। बाबू भगवानदीनजीके द्वारा समालोचनार्थ प्राप्त। विवरणको पढ़कर बहुत सन्तोष होता है। आश्रम अपना काम अच्छी तरह कर रहा है। पहले वर्षमें ही उसे ३९ विद्यार्थियोंका मिल जाना आगेके लिए बहुत उन्नतिकी आशा दिलाता है। आमदनी भी इस वर्षकी सन्तोष जनक हुई है। ११९९८॥) की आमदनी होकर ९८७४॥=) खर्च हुए हैं। इससे जान पड़ता है कि जैन समाजमें कुछ कुछ विद्याकी उपयोगिता समझी जाने लगी है। पर अभी जैनियोंके लिए बहुत कुछ करना बाकी है। इस लिए हम उनका ध्यान आश्रमकी ओर खींचते है। अभी जितना कुछ हो रहा है, उसके लिए केवल यही कहा जा सकता है कि हां कुछ न होनेसे यह अच्छा है।

इनके अतिरिक्त हमारे पास जैनबोर्डिंगलाहोर और ऐलक-

पन्नालालजैनपाठशालाशोलापुरकी रिपोर्टें भी समालोचनार्थ आई हैं। पर खेद है कि स्थानके न रहनेसे उनके सम्बन्धमें हम कुछ विशेष नहीं लिख सकें। हम उक्त संस्थाओंके उदार कार्यकर्त्ताओंसे इस बाबत क्षमा चाहते हैं।

समाचारसार।

जयपुर—से हमारे पास एक हितैषी महाशयका भेजा हुआ लेख आया है। लेख विलम्बसे पहुचनेके कारण हम उसे छाप न सके। उसका संक्षिप्त सार यह है, कि "जयपुरमें पहले जैनियोंकी बहुत संख्या थी पर जबसे जातिमें कन्याविक्रय और वृद्धविवाह-की बुरी प्रथा जारी हुई है तबसे यहा जैनियोंकी संख्याका ह्रास ही होता जाता है। घटते घटते आज मुश्किलसे छह हजार संख्या बची होगी। इतनेपर भी जातिके कुलकलंक बूढ़ोंको शर्म नहीं लगती जो मरते मरते भी वे विवाह करनेकी तैयारी करते है। बेचारी बालिकाओंका जीवन नष्ट करना चाहते हैं। पाठक, मुझे कुछ लिखनेकी जरूरत न थी, पर इस महीनेमें दो बूढ़े बाबा अपना विवाह करेंगे। मुझे बेचारी उन अबोध बालिकाओंपर दया आई। मेरा हृदय उनके भावी दु:खको न सह सका। इस लिए जातिके सामने यह हाल मुझे उपस्थित करना पड़ा। क्या जातिके पञ्च अपनी इन्द्रियोंको वश करके—एक दिनके भोजनकी परवा न करके—इस घोर अत्याचारका प्रतिकार करेंगे? क्या उन अपनी लड़कियोंके भावी जीवनपर खयाल करके उनके गलेपर चलती हुई छुरीको रोकेंगे? और इन बूढ़े व्याघ्रोंके लिए इस

महापापका कोई भयानक दण्ड देनेकी कोशिश करेंगे ? जिससे ऐसा अत्याचार न हो। मैं आशा करता हूं कि जयपुरकी पञ्चायती इस बातपर अवश्य खयाल करेगी कि जिस स्थानको टोडरमलजी, अमरचन्दजी, जयचन्दजी आदि पुरुषरत्नोंने अवतार लेकर पवित्र किया है उसकी छातीपर इस महाकलंकका दाग न लगने देगी। एक हितैषी।

विवाहमें दान—गोदेगांव निवासी श्रीयुक्त मोतीलालजी दगड़ाका माघ विदी ८ को विवाह था। आपने चाहा कि हमारा विवाह जैनविवाह पद्धतिके अनुसार हो। इसपर लड़कीका पिता सम्मत नहीं हुआ। एक ओरका यह दुराग्रह देखकर आप भी अपने धार्मिक प्रेमको नहीं दबा सके। आपने साफ कह दिया कि जैनपद्धतिके अनुसार विवाह होगा तब ही हम विवाह करेंगे नहीं तो हमें कुछ दरकार नहीं है। आपकी इस दृढ़तापर लड़कीके पिताको जबरन यह स्वीकार करना ही पड़ा। विवाह ठीक जैनविधिके अनुसार सम्पादन किया गया। उस समय आपने जैन संस्थाओंके लिए भी कुछ दान देकर अपनी उदारताका परिचय दिया है। वह सबके अनुकरण करने योग्य है।

१०१) नायडोंगरीके जैनमन्दिर। ११)। जैनसिद्धान्त पा० मोरेना।
२१) सरस्वतीभवनआरा। ११) श्रीऋषभब्रह्मचर्याश्रम।
११) स्याद्वाद पाठशालाकाशी। ५) खण्डेलवाल पंच महासभा।

लालचन्द काला मालेगांव।

खेद और आनन्द दहलीमें—करीब ढाई महीनेसे विद्याप्रचारिणीजैनसभा स्थापित है। उसके सभापति श्रीयुक्त रिक्खूमलजी और उपसभापति लाला रामजीदास कागजी हैं। सभाका उद्देश्य

विद्याप्रचार और उपदेशादिकेद्वारा जातिकी कुरीतियां नष्ट करना है। उद्देश्य तो बहुत अच्छा है यदि सभाके कार्यकर्त्ता स्वयं उसपर चलकर औरोंको भी उसपर चलनेके लिए प्रयत्न करें। क्योंकि पर उपदेश कुशल बहुतेरे की उक्तिको चरितार्थ करने वाले तो बहुत हैं, पर उन लोगोंकी बड़ी जरूरत है जो कह कर स्वयं भी उसपर चलने वाले हों। समाजपर ऐसे लोगोंका ही बहुत प्रभाव पड़ता है।

हमें यह जानकर बहुत खेद होता है कि उक्त सभाके कार्यकर्त्ताओंने जिस उद्देश्यको लेकर यह सभा स्थापितकी है, वे स्वयं भी उस पर चलनेके लिए बाध्य नहीं हैं। दहलीके एक सम्वाददाताने हमारे पास जो समाचार छपनेके लिए भेजे हैं और यदि वे सत्य हैं तो हम कहेंगे कि यह हमारे लिए बड़ी भारी लज्जाकी बात है जो हम स्वयं अपने स्थापित किये उद्देशपर नहीं चलते हैं। लेखकने लिखा है कि श्रीयुक्त सभापति महाशयने अपने भतीजेके लिए एक लड़का दत्तक लिया है। उसकी खुशीमें उन्होंने धार्मिक संस्थाओंको भी कुछ दान दिया है और वह सबके अनुकरण करनेके योग्य है। इसमें सन्देह नहीं कि यह कार्य आपने बहुत अच्छा किया है। आपकी धर्मबुद्धिका इसमे परिचय मिलता है। पर ऐसी धर्म बुद्धिके होनेपर भी फिर न जाने क्यों आपने इस मंगल कार्यमें वेश्याओंका नाच करवाया? क्या इन कुलकलंकिनियोंके बिना आपके कार्यमें शोभा नहीं होती? जो पैसा इन्हें दिया गया, क्या ही अच्छा होता यदि वही अपने देश या जातिके दुखी, अनाथ, भाइयोंके उपकारमें खर्च किया जाता? इसीसे तो हम कहते हैं कि हमें उन लोगोंकी जरूरत है जो पर उपदेश कुशल बहुतेरे इस उक्तिके

हिन्दूविश्वविद्यालय—के लिए बम्बईके निवासियोंने लगभग ढाई लाख रुपया दिया है। भारतवर्षके प्रधान व्यापारकी जगहसे बहुत थोडा द्रव्य मिला देखकर बड़ी निराशा होती है। जिन बम्बईके धनिकोंने भारतवर्षके अकर्मण्य दलको मालामाल बना दिया, जिनसे कि आज देशका कुछ भी उपकार न होकर उल्टा अपकार हो रहा है, उनके लिए देशकी उन्नतिके मूल हिन्दूविश्वविद्यालयके लिए इतना थोड़ा द्रव्य देना क्या संतोषकारक कहा जा सकता है? नहीं। आशा है बम्बईवासी जिस शहरमें रहते है उसकी योग्यताके माफिक धन द्वारा विद्यालयको उपकृत करेंगे।

इन्दौर—की प्रतिष्ठा निर्विघ्न समाप्त होगई। प्रतिष्ठाकारक बाबा शीलचन्दजी जयपुर निवासी थे। खुशीकी बात है कि बाबाजीने संस्कृत न जानकर भी प्रतिष्ठा निर्विघ्न समाप्त करवादी। आपके पास एक भाषाका प्रतिष्ठापाठ है। सुनते है कि उसीसे आपने प्रतिष्ठा करवाई थी। अच्छा हो यदि बाबाजी उस प्रतिष्ठापाठका सर्व साधारणमें प्रचार करदें, जिससे प्रतिष्ठा करानेवालोंको भी सुगमता हो जायगी और जो प्रतिष्ठाकारकोंसे वर्तमानके प्रतिष्ठाचार्य हजारों रूपया ठहराकर प्रतिष्ठा करवाते हैं उनका पैसा भी बच जायगा।

प्रतिष्ठामें पन्द्रह हजारके लगभग जनसमुदाय एकत्रित हुआ था। सुनते हैं कि बाहरकी संस्थावालोंको भी कुछ सहायता मिली है। कितनी? यह ठीक मालूम नहीं।

नवीन पत्र—फिरोजपुरकी जीवदयाप्रचारकसभाकी ओरसे एक मासिक पत्रका निकालना निश्चित किया गया है। यह हिन्दी,

अंग्रेजी और उर्दूमें होगा । इसमें जीवदयाके प्रचार करनेवाले अच्छे अच्छे विद्वान् डाक्टरों और साइन्सवेत्ताओंके उत्तमोत्तम लेख तथा और भी सब विषयके लेख रहा करेंगे। पत्र अपने ढङ्गका एक ही होगा। इतनेपर भी मूल्य केवल १) रु० ही रक्खा जाना निश्चित किया गया है। सभा चाहती है कि पत्रका जन्म मार्च महीनेसे हो जाय । दयाप्रेमियोंको ग्राहक होनेकी स्वीकारता देनी चाहिए। अमोलकचन्द फिरोजपुरछावनी।

जैनतत्त्वप्रकाशक--इटावेका तत्त्वप्रकाशक प्रकाशित होगया।

रत्नमाला--सुना तो यह था कि खुर्जेकी श्रीमती रत्नमालाके दर्शन एक ही सप्ताह बाद हो जायँगे। फिर न जाने क्यों सप्ताहपर सप्ताह बीत गये तब भी उसके अभीतक दर्शन नहीं हुए ? यह विलम्ब एक गहरा सन्देह पैदा करता है। हम तो यह चाहते थे कि माला अपनी कामनाएं पूर्ण करके विश्रान्ति लाभ करती।

जैनबोर्डिङ्ग--यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि बड़वानी (निमाड़) में श्रीयुक्त ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी और मास्टर दर्यावसिंहजीके उद्योगसे जैनबोर्डिङ्गकी स्थापना हुई है। उसके लिए लगभग छह सात हजारका द्रव्य भी लिखा गया है। विशेष खुशीकी यह बात है कि वहांके महाराजा साहब भी इसके सहायक हैं। इस प्रजा प्रेमके लिए महाराजा साहब धन्यवादके पात्र हैं। निमाड़ प्रान्तके जैनियोंमें सबसे पहला जागृतिका चिन्ह यही है।

उपाधिप्रदान—प्रातःस्मरणीय स्याद्वाद वा. पं. गोपालदासजीकी अपूर्व जैनसिद्धान्तज्ञतापर मुग्ध होकर कलकत्ता कॉलेजके श्रीशतीशचन्द्र महामहोपाध्याय आदि प्रसिद्ध विद्वानोंने उन्हें न्यायवाचस्पतिकी उपाधि प्रदान की है। पंडितजीका भिन्नधर्मियों द्वारा यह अपूर्व सम्मान देखकर यह कहे विना नहीं रहा जाता कि **गुण ना हिरानो गुणगाहक हिरानो है।** यही तो कारण था कि जैनसभाओंके द्वारा दी हुई पदवीसे चिढ़कर कुछ अनुदार लोगोंने आकाश पाताल एक कर दिया था। सच है, **चिरन्तनाभ्यासनिबन्धनेरिता गुणेषु दोषेषु च जायते मतिः।** जिसका जैसा अभ्यास होता है वह काम भी वैसा ही करता है।

ब्याहका स्वांग—बम्बई प्रदेशमें रुतवी नामकी एक जाति है। इस जातिमें प्रति दस या बारह वर्ष बाद ब्याह होता है। गत शनिवारको सूरतमें इस जातिमें चार सौ ब्याह हो गये। केवल एक दुलहनकी अवस्था बारह वर्षसे अधिक थी, अधिक दुलहनें एकसे ग्यारह वर्षके भीतर ही की थीं। दूल्होंकी अवस्था तीनसे नौ वर्षतक थी। विवाहके समय अधिकांश वरवधू अपनी माता पिताकी गोदमें बैठे थे। जिसमें वे रोवें चिल्लायँ नहीं इसलिये उन्हें लड्डू पेढ़े खिलाये गये थे!

लश्कर (गवालियर)—में जैन लायब्रेरीकी स्थापना हुई है। वहांके उत्साही नव युवकोंको धन्यवाद है।

जयपुर—से भी एक नवीन जैनपत्रका जन्म होना सुना गया है। कब होगा? यह जाननेकी उत्कण्ठा है।

सूचनाएँ ।

१

महाराष्ट्रीयखण्डेलवालपञ्चमहासभाके किसी भी फण्डका जिन जिन महाशयोंपर रुपया लेना है, उन्हें उसके भेजनेकी कोशिश करनी चाहिए। विना रुपयोंके कितने ही काम रुके हुए पड़े हैं। वर्तमानमें सभाको एक उपदेशकके रखनेकी वड़ी आवश्यक्ता है। पर जवतक हमारे भाई रुपयोंके भेजनेकी जल्दी न करेंगे तव तक यह जरूरी काम रुका हुआ ही पड़ा रहेगा। हम आशा करते है कि सब सज्जन हमारी प्रार्थनापर अवश्य ध्यान देंगे।

प्रार्थी—खुशालचन्द नांदगांव. (नाशिक)

२

सस्ते और सुन्दर भावोंके चित्र।

जयपुरकी चित्रकारीकी प्रशंसा करना व्यर्थ है। उसकी देश देशान्तरोंमें प्रसिद्धि ही इस बातका प्रमाण है कि वह कितनी मनोमोहिनी होती है। हमारे भाई मंदिरोंके लिए हजारों रुपयोंके चित्र मंगवाते है पर उन्हें ठीक ठीक कीमत ज्ञात न होनेसे बहुत कुछ हानि उठानी पड़ती है। इस लिए हमने **वर्द्धमानजैन विद्यालयमें** इसका प्रवन्ध किया है।

यहांसे बहुत सुन्दर और सस्ते चित्र भेजे जा सकेंगे। इसमें एक विशेष बात यह होगी कि ये चित्र विद्यालयके चित्रकारीक्लासके अध्यापक तथा छात्रोंके तैयार किए हुए होंगे। हमें पूर्ण आशा है

कि हमारे भाई सब तरहके चित्र यहींसे मंगवानेकी कृपा करते रहेंगे।

मेनेजर—श्रीवर्द्धमानजैनविद्यालय जयपुर.

३

जैन पाठशालाओंमें जैनधर्मके जानकार अध्यापकोंकी बहुत आवश्यक्ता रहती है। न्याय व्याकरणादिके जानकार होने पर भी वे धार्मिक सिद्धान्तसे अनभिज्ञ रहते हैं। इस लिए जैनधर्मकी उन्नतिमें बड़ी बाधा पडती है। हमने ऐसे पंडितोंके लिए तथा गुजराती, मराठी, हिन्दी, ट्रेनिंगकॉलेज या हाईस्कूलोंमें पढे हुए मास्टरों और विद्यार्थियोंके लिए जैनधर्मके सिखानेका प्रबन्ध किया है। उन्हें सब विषयका पत्र व्यहार नीचे पतेसे करना चाहिए।

बुद्धूलाल श्रावक, हारगंज दमोह.

४

हम सब भाइयोंसे प्रार्थना करते हैं कि वे अपने अपने गांवके पञ्चायती समाचारोंके भेजनेकी कृपा करें। हम उन्हें सहर्ष छापेंगे। हमारे इस पत्रका यह खास उद्देश्य है कि इसमें जाति सम्बन्धी हर प्रकारके झगड़े प्रकाशित किये जाकर और उनसे होनेवाली जातिकी हालत दिखला कर उनके मिटानेका उपाय किया जाय। क्योंकि हमारी जातिके अध:पतनके कारण ये घरेलू झगडे ही हैं। जबतक ये नष्ट न होंगे तबतक जातिकी उन्नति होना कष्ट साध्य ही नहीं किन्तु असंभव है। आशा है कि पाठक हमारी इस प्रार्थनापर ध्यान देंगे।

जातिका एक तुच्छ सेवक—

उदयलाल काशलीवाल.

पवित्र, असली, २० वर्षका आजमूदा, सैंकड़ों प्रशंसा पत्र प्राप्त,
प्रसिद्ध हाजमेकी, अक्सीर दवा,

फायदा न करे तो दाम वापिस।

यह नमक सुलेमानी पेटके सब रोगोंको नाश करके पाचनशक्तिको बढ़ाता है जिससे भूख अच्छी तरह लगती है, भोजन पचता है और दस्त साफ होता है। आरोग्यतामें इसके सेवनसे मनुष्य बहुतसे रोगोंसे बचा रहता है। इसके सेवनसे हैजा, प्रमेह, अपच, पेटका दर्द, वायुशूल, संग्रहणी, अतीसार बवासीर, कब्ज, खट्टी डकार, छातीकी जलन, बहुमूत्र, गठिया, खाज, खुजली, आदि रोगोंमें तुरन्त लाभ होता है। बिच्छू, भिड़, बरोंके काटनेकी जगह इसके मलनेसे लाभ होता है, स्त्रियोंकी मासिक खराबीकी यह दुरुस्ती करता है। बच्चोंके अपच दस्त होना, दूध डालना आदि सब रोगोंको दूर करता है। इससे उदरी जलोदर, कोष्टवृद्धि, यकृत्, प्लीहा, मन्दाग्नि, अम्लशूल और पित्तप्रकृति आदि सब रोग भी आराम होते हैं। अतः यह कई रोगोंकी एक दवा सब गृहस्थोंको अवश्य पास रखनी चाहिये। व्यवस्था पत्र साथ है। कीमत की शीशी बड़ी ॥) आठ आना। तीन शी० १।-) छह शी० २॥) एक दर्जन ५) डाकखर्च अलग।

दद्रुदमन—दादकी अक्सीर दवा। फी डिब्बी।) आना।

दन्तकुसुमाकर—दांतोंकी रामबाण दवा। फी डिब्बी।) आना।

नोट—हमारे यहां सब रोगोंकी तत्काल गुण दिखानेवाली दवाएं तैयार रहती हैं। विशेष हाल जाननेको बड़ी सूची मंगा देखो।

मिलनेका पता:—

चंद्रसेन जैनवैद्य—इटावा।